नेहरू बाल पुस्तकालय

जादुई द्वीप

जइ व्हिटेकर

अनुवाद : **मुरारी शरण**

चित्र : **अमिताभ सेनगुप्ता**
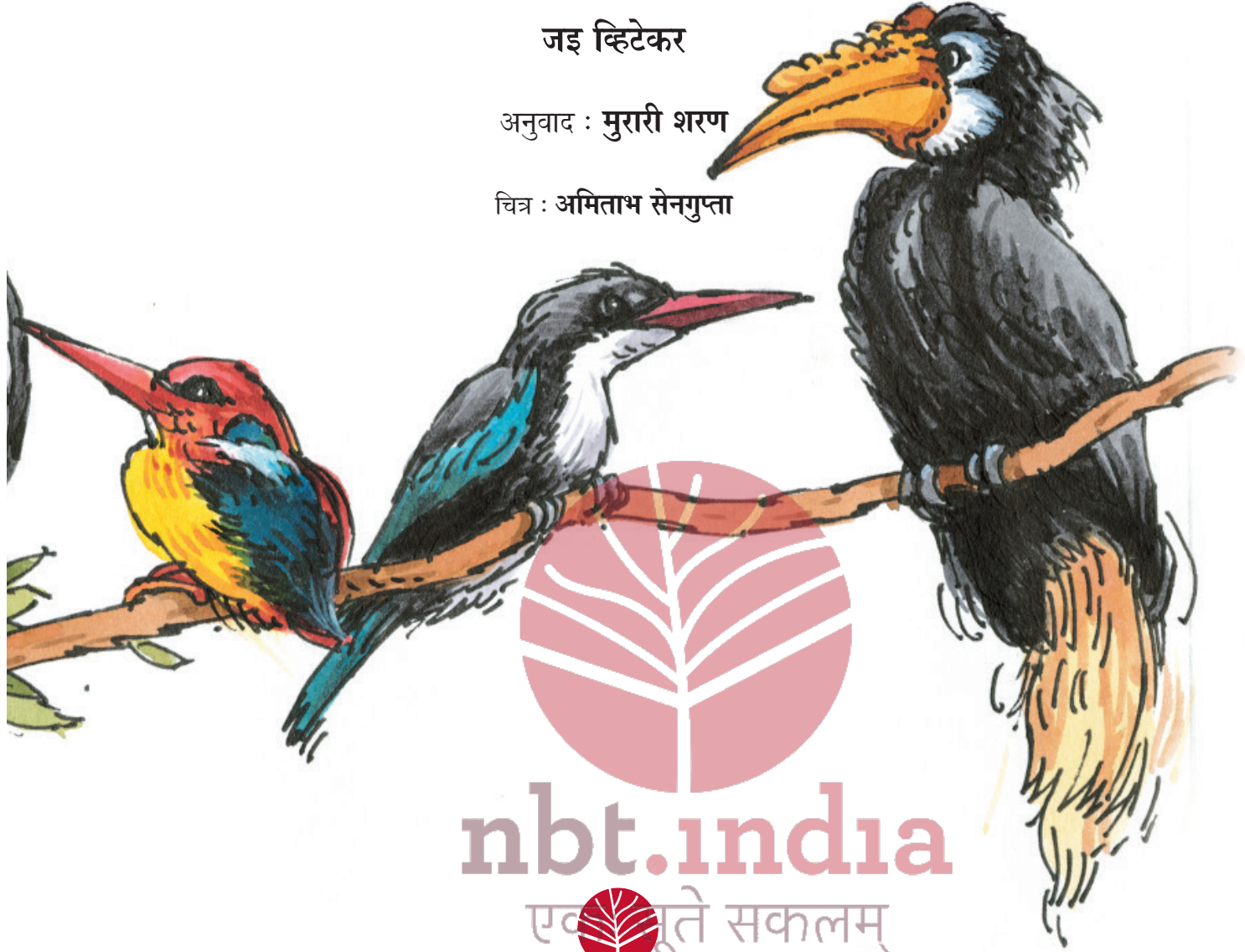
nbt.india
एकः सूते सकलम्

राष्ट्रीय पुस्तक न्यास, भारत
NATIONAL BOOK TRUST, INDIA

8 से 12 वर्ष के बच्चों के लिए

राष्ट्रीय पुस्तक न्यास, भारत की स्थापना पुस्तकों के प्रोन्नयन और पठन अभिरुचि के विकास के उद्देश्य से सन् 1957 में भारत सरकार (उच्चतर शिक्षा विभाग, मानव संसाधन विकास मंत्रालय) द्वारा की गई थी। न्यास द्वारा हिंदी, अँग्रेजी सहित 30 से अधिक भाषाओं व बोलियों में पुस्तकों का प्रकाशन किया जाता है। बच्चों की पुस्तकों का प्रकाशन सदैव से संस्था की प्राथमिकता रही है।

ISBN 978-81-237-7179-3

पहला संस्करण : 2014
पहली आवृत्ति : 2019 (*शक* 1941)

Magic Islands *(English Original)*
Jadui Dweep *(Hindi)*

₹ 100.00

निदेशक, राष्ट्रीय पुस्तक न्यास, भारत
नेहरू भवन, 5 इंस्टीट्यूशनल एरिया, फेज-II
वसंत कुंज, नई दिल्ली-110 070 द्वारा प्रकाशित
www.nbtindia.gov.in

प्रिय पाठको!

मुख्य भूमि के बहुत से ऐसे लोग हैं जो अंडमान और निकोबार द्वीप समूह को देखकर लुभा जाते हैं। हमने कई सालों तक इसकी सुंदरता को देखा और इसका आनंद उठाया है। हालाँकि वहाँ हो रहे कुछ बदलावों से हम अशांत हो जाते हैं। हम जारवा, सेंटीनलीज, नया हवाई-अड्डा और शार्क फिन इंडस्ट्री के बारे में नई जानकारी हासिल करने की कोशिश करते हैं। द्वीपवासियों के लिए यह सब रोजाना घटने वाली सामान्य बातें हैं। किंतु मेरे जैसे लोगों के लिए यह अत्यंत दिलचस्प एवं रोमांचित करने वाला है।

मेरा इस द्वीप पर आना-जाना लगभग तीस वर्ष पहले शुरू हुआ जब मैं *हरियाणा राज्य* के पुराने जहाज पर सवार हुआ। मुझे लगा कि समुद्री बीमारी हो गई है, मैं रंगीन लकड़ी के ऊपरी शिरा पर बैठा हूँ और मेरे पैर इतने कमजोर हो गए हैं कि मैं खड़ा हो पाने में असमर्थ हूँ। मेरे साथ तमिलनाडु के इरूला जनजाति का एक सपेड़ा अन्नामलाई भी था। हमने मद्रास के स्नेक पार्क में एक साथ काम किया था। वहाँ वह जानवर पहुँचाता था जबकि मैं कार्यालय में कागज लगाने का काम करता था। लेकिन याद रखिए पेपर लगाने का यह काम साँप पकड़ने जितना ही खतरनाक काम था।

इरूला जनजाति के लोग साँप पकड़ने में माहिर होते हैं ठीक वैसे ही जैसे कुछ लोग बाघ या चीता का पता लगाने में माहिर होते हैं, उसी तरह ये साँप का पता लगा लेते हैं। बड़े जानवरों के पैरों के निशान स्पष्ट होते हैं जिससे उनके बारे में पता लगाना आसान होता है जबकि साँप का निशान इतना धुंधला और पतला होता है कि उसे समझना और उसके बारे में पता लगाना कठिन होता है। अन्नामलाई साँप के निशान को देखकर

उसके आकार, प्रजाति के बारे में बता सकता था, और यह भी कि वह यहाँ से कब गुजरा था।

यही कारण था कि मैंने उसे अपने साथ ले लिया था। उसके साथ होने से मेरी जिज्ञासा और बढ़ गई थी। अनुसंधान तथा जानकारी हासिल करने के लिहाज से अंडमान की यह मेरी पहली यात्रा थी। स्नेक पार्क में रेंगने वाली कई ऐसी प्रजातियाँ पाई जाती थीं जो या तो विज्ञान जगत के लिए नई थी या दुनिया के इस हिस्से के लिए।

इस द्वीप के बारे में पहले से बहुत कम अध्ययन किया गया था, ऐसे में हम आशा कर रहे थे कि इस अभियान के दौरान हमें कुछ नए और बिना नाम वाले

जानवरों के बारे में जानकारी मिलेगी। अंडमान के निवासियों ने यहाँ के स्थानीय लोगों के बारे में जो जानकारी दी वह अचंभित करने वाली थी। स्थानीय लोग वे हैं जो यहाँ के मूल निवासी हैं। अंडमान और निकोबार द्वीप समूह के स्थानीय जनजातियाँ जारवा, ओंज, सेनटाइनलीस, अंडमानी, सोमपेन और निकोबारी हैं। इन्हें जनजातिय, मूल निवासी तथा आदिवासी भी कहा जाता है। चूँकि बाकी शब्द अपमानजनक लगता है इसलिए अब इनके लिए सिर्फ आदिवासी शब्द का प्रयोग किया जाता है। अंडमान में मैंने इनके लिए 'जंगली' शब्द सुना जिससे मुझे बहुत दुःख हुआ। यह हम सबके लिए सबसे अपमानजनक

संबोधन है। यह शब्द बहुत गुमराह करने वाला भी है, क्योंकि हम लोग उद्दंड और असभ्य तरीके से वर्ताव करने वाले को जंगली कहते हैं। वास्तव में यहाँ के मूल निवासी अधिक नम्र और विचारवान हैं।

जहाज से यात्रा के दौरान मुझे कुछ लोगों से मुलाकात हुई जिन्होंने 'जंगली' के बारे में बताया। मैंने उनसे पूछा कि उन्हें ऐसे भयावह नाम से क्यों संबोधित करते हैं, तो उन्होंने शांतिपूर्वक उत्तर दिया, "वे लोग मूर्ख हैं, कपड़े नहीं पहनते और जंगली जानवर खाते हैं...उनमें से कुछ ने चावल का स्वाद भी नहीं चखा है। वे पूरी तरह से असभ्य हैं। जब तक मैं इस द्वीप पर रहा, इस 'असभ्य' शब्द को भूल नहीं पाया। मैं इन मूल निवासियों की अचरज भरी संस्कृति और जीवन शैली के बारे में जितना जानता गया उतना ही यह 'जंगली' शब्द मुझे बेतुका लगने लगा।

मैंने इस पर बहुत विचार किया कि कैसे बिना विचार किए और जल्दबाजी में इस शब्द का प्रयोग किया जाता है। भारत में यह सामान्य अवधारणा है कि जंगल में रहने वाले सभ्य नहीं हैं क्योंकि वे हम लोग जैसा व्यवहार नहीं करते हैं। वे कस्बों में नहीं रहते तथा स्कूल, कॉलेज नहीं जाते। उन्हें धन कमाने से प्रेम नहीं है, पकाया हुआ खाना नहीं खाते तथा टेलीविजन नहीं देखते। वे हम से भिन्न हैं और हमारी राय यह है कि जिसकी प्रकृति हमसे भिन्न है वह किसी भी तरह ठीक नहीं है। क्या ऐसा मानना उचित है?

एक बार फिर हमें 'असभ्य' शब्द पर विचार करना चाहिए। इसका अर्थ सभ्य के विपरीत है। मेरे विचार से सभ्य आदमी वही है जो दूसरों का सम्मान करता है तथा आसपास के लोगों का आदर करता है एवं समझदारी से व्यवहार करता है। निश्चित रूप से यहाँ के मूल-निवासी ऐसा करते हैं। वे दूसरों के बच्चे को अपना बच्चा समझकर देखरेख करते हैं, जो भी खाना लाते या शिकार कर लाते हैं, बाँटकर खाते-पीते हैं। उनकी कोई निजी संपत्ती नहीं होती। सभी वस्तुएँ जाति या समूह का होता है। 'मेरा' और 'तुम्हारा' वाली बात इन लोगों में नहीं है। इसीलिए इनमें छोटी-छोटी वस्तुओं को लेकर झगड़ा नहीं होता। जबकि सभ्य कहे जाने वाले हम लोग अक्सर ऐसा किया करते

हैं। याद कीजिए वह समय जब आपने अपनी मनपसंद चीज़, कंप्यूटर या क्रिकेट बैट के लिए अंतिम बार लड़ाई की थी?

अपने आसपास के पर्यावरण से तालमेल बनाए रखना सभ्य होने का दूसरा लक्षण है। यहाँ के मूल निवासी अपनी विनम्रता तथा प्राकृतिक संसाधनों की देखभाल तथा इनका बुद्धिमानी से उपयोग करने के लिए जाने जाते हैं। ये उतना ही लेते हैं जितने की इन्हें जरूरत होती है जबकि हम लोग हर जगह लूट-खसोट में लगे रहते हैं। जैसा कि इस पुस्तक में आगे पढ़ेंगे कि अंडमान और निकोबार द्वीप के मूल निवासियों को अपने पर्यावरण की कितनी अच्छी और गहरी जानकारी है तथा वे इसका कितना सम्मान करते हैं। कितना सुंदर होता यदि हम गैर-आदिवासी लोग भी उनके जैसे ही चतुर होते! लेकिन हम जीवनदायी जंगल काट देते हैं, सुंदर और दुर्लभ जानवरों को मार देते हैं। जहरीला पदार्थ जलपट्टी में डाल देते हैं। यहाँ तक कि हम ऐसी जगहों पर बड़े-बड़े कस्बे बसा देते हैं जहाँ पानी का एक बूँद भी नहीं मिलता। जारवा एवं शोमपेन लोगों से हमें निश्चित रूप से यह सीख मिलती है कि प्राकृतिक संसाधनों का बेहतर उपयोग करते हुए हम अपना जीवन कैसे सुंदर ढंग से जिएँ। किंतु हमने जो उनकी दुनिया बिगाड़ दी है, इससे वे हमेशा परेशान रहते हैं।

ऐसे में यदि आप अपने लिए 'जंगली' शब्द का प्रयोग नहीं करते हैं, तो उनके लिए भी इसका उपयोग न करें!

इस द्वीप के लोग अपने निवास स्थान के इतिहास के बारे में बहुत कम जानते हैं। यह एक और सदमा था जिसका हमें सामना करना पड़ा। नमकीन पानी में रहने वाले मगरमच्छों का यह बसेरा (घोंसला) बनाने का समय था। हम ढेर सारे अंडों को एकत्र कर इसे स्नेक पार्क के प्रजनन केंद्र पर जमा करा देना चाहते थे। इसकी अनुमति देने वाले अधिकारी ने बताया कि घड़ियाल हर साल एक अंडे देता है। इस प्रकार उसने हमें एक अंडे का एक घोंसला एकत्रित करने की अनुमति दिया। हमने उस अधिकारी को समझाने का प्रयास छोड़ दिया जबकि उसके कार्यालय के हर व्यक्ति ने बताया कि नमकीन पानी में रहने वाला घड़ियाल 30 से 60 अंडे देता है।

भारत की आजादी से पहले अंग्रेज अधिकारियों द्वारा लिखित कुछ पुरानी रपटों के सिवा अंडमान और निकोबार से संबंधित जानकारी पर बहुत कम पुस्तकें थीं। इसके बावजूद इनके बारे में जंगलों में नंगे, हिंसक रूप में रहने वाली तथा इसी तरह इनके द्वारा हजारों कैदियों की देखरेख व दंड देने वाली बातें बिल्कुल निराशाजनक व असामान्य है। मुझे उनकी लाजवाब संस्कृति व पारिस्थितिक तंत्र के बारे में थोड़ी सी जानकारी मिली जिसमें बच्चों के लिए कुछ भी उपयोगी नहीं था।

इसमें अंडमान और निकोबार के मूल-निवासियों के बारे में ऐसी कोई भी जानकारी नहीं थी जो उनके बच्चों को दी जा सके। अंडमान और निकोबार के उत्तराधिकारियों और संरक्षकों के बारे में भी कुछ नहीं था। यह अच्छा नहीं लगा, क्योंकि हम लालची वयस्कों की तुलना में बच्चे पर्यावरण के संरक्षण में अधिक दिलचस्पी दिखाते थे जो हम लोगों से कम से कम दस गुणा अधिक समझदार भी थे।

मैं इस आशा के साथ यह पुस्तक लिख रहा हूँ कि इसे पढ़ने के बाद यहाँ के बच्चे अपने बहुत खास निवास-स्थान के बारे में गर्व करने लगें। इससे ऐसी ढेर सारी बातों की जानकारी आपको मिलेगी, जिसके बारे में आप पहले से जानते होंगे। दरअसल, मुझे विश्वास है कि जितना मैं लिख रहा हूँ उससे अधिक आप जानते होंगे। किंतु साथ ही, इन द्वीप समूहों के आकर्षक इतिहास जानकर हमारी उत्सुकता बढ़ जाती है। द्वीप के चट्टान एवं वन, पृथक जनजाति की अनोखी संस्कृति जिनका बाहरी लोगों से कोई संपर्क नहीं रहता। यदि वे बाहरी लोगों से संपर्क करते भी हैं तो उपहारों, हाव-भाव और तीरों के माध्यम से तथा उनसे उचित दूरी बनाए रखते हैं। भारत के अन्य भागों में रहने वाले युवाओं के लिए भी इस किताब में ढेर सारी जानकारी है। मैं आशा करता हूँ कि वे इस जादुई व मनमोहक द्वीप पर एक दिन घूमने जरूर आएँगे।

यदि आप काल्पनिक कहानियाँ पसंद करते हैं तो आप अंडमान और निकोबार द्वीप का इतिहास जानने का प्रयास करेंगे क्योंकि इसमें अच्छी कहानी के सारे तत्व मौजूद हैं। यहाँ समुद्री डाकू, जहाजों को नष्ट करना, भूकंप, तूफान, घने बीहड़ जंगलों में दुस्साहसिक कार्य, खून-खराबा, हीरो और खलनायक आदि की रोचक कहानियाँ हैं। लेकिन इस द्वीप

के उपनिवेश बनने की कहानी का एक अलग ही अध्याय है। यह उपयोगी शिक्षा और हिदायतों से भरा हुआ है जिसमें से निष्कर्ष खुद आपको निकालना होगा क्योंकि यह काम मैं नहीं करने जा रहा हूँ। इतिहास हमें हमारे बारे में बताता है इससे यह जानने में सहायता होती है कि हम हैं कौन। उदाहरण के तौर पर इन जनजातियों के अनुभवों से हमें यह परखने का मौका मिलता है कि इन मूल-निवासियों, या वैसे लोग जो हमसे भिन्न हैं, के प्रति हमारा खुद का रवैया कैसा है।

मैं एक शिक्षक हूँ और बच्चों के साथ रहने में मुझे आनंद आता है। पुस्तक के माध्यम से आप सब मेरी इस यात्रा में शामिल हो जाइए जिससे कि इस विलक्षण द्वीप के बारे में रोचक तथ्यों व धारणाओं के बारे में हमें जानकारी मिल सके। संभवतः इस छोटी सी किताब से अंडमान और निकोबार द्वीप के प्रति तुम्हारी जिज्ञासा बढ़ेगी कि वहाँ के निवासी किस तरह आनेवाली चुनौतियों और बदलाव का सामना करते हैं। यदि ऐसे इस द्वीप के बच्चों के साथ होता है तो इस विचित्र माहौल में भी यहाँ की जनजातियाँ जीवित रह सकती है। आप लोग नई पीढ़ी के तथा समझदार बच्चे हो, आप लोग पहले की हुई गलती को सुधार सकते हो। लेकिन सबसे पहले आप लोगों को इस द्वीप तथा यहाँ रहने वाले लोगों के इतिहास के बारे में जानना होगा। फिर इस बात पर गौर करना होगा कि भविष्य में कैसे कदम उठाए जाएँ। इस जादुई द्वीप के बारे में यही सारी जानकारियाँ हैं।

मैं यह पुस्तक अन्नामलाई को समर्पित करता हूँ जो अब इस दुनिया में नहीं हैं। उन्होंने ही मुझे इस द्वीप पर पाए जाने वाले जानवरों से परिचय करवाया था। मैं मद्रास क्रोकोडाइल बैंक के रोम व्हिटेकर और हैरी एंड्रूज को उनके द्वारा दी गई जानकारी एवं संसाधन संबंधी सहायता के लिए धन्यवाद देता हूँ।

जहाजों का नाम इटालीसाइज्ड है तथा देशों तथा कस्बों का नाम पुराना ही दिया गया जो पहले था। उदाहरण के तौर पर मैंने म्यांमार के बदले बर्मा एवं चेन्नै के बदले पुराना नाम मद्रास लिखा है। जहाँ मुझे लगता है कि आप लोग पुराना नाम भूल गए हो वहाँ मैंने नया नाम भी दे दिया है।

आप हैं करोड़पति

अमेरिका के एक कार मैकेनिक को एक लॉटरी लग गई। अचानक ही उसके पास खर्च करने के लिए लाखों रुपये मिल गए। टेलीविजन पर उसका साक्षात्कार आ रहा था, मैं सोच रहा था कि टेलीविजन पर वह प्रसन्नचित्त, मुस्कुराता हुआ और जोर-जोर से हँसते हुए मुद्रा में दिखाई देगा। लेकिन वह भाग्यशाली लॉटरी विजेता वास्तव में उदास और हताश दिखा जैसे वह किसी के अंतिम संस्कार में शामिल होकर आ रहा हो। जब उससे पूछा गया कि क्या वह दुनिया के उच्च श्रेणी के लोगों में खुद को शामिल पाकर खुश है तो उसने तुरंत नकारात्मक भाव में सिर हिला दिया। उसने अपने दुःख और चिंताओं को गिनाना शुरू किया : उसके मित्र और संबंधी उससे ईर्ष्या करते हैं, सब लोग उसे पैसे खर्च करने एवं निवेश करने की सलाह देने लगे हैं। उसका बेटा काम छोड़कर उन पैसों से जीवन का आनंद उठाना चाहता है। उसकी पत्नी किसी शानदार शहर में जाकर बसना चाहती है। रिपोर्टर और टेलीविजन पर साक्षात्कार लेने वाले हर समय उसे परेशानी में डाल रहे थे।

टेलीविजन के रिपोर्टर भी आसानी से जान छोड़ने वाले नहीं थे। उसने उदास करोड़पति से फिर एक कठिन प्रश्न पूछा—ठीक है, आप दूसरों की बातों पर ध्यान मत दो। उसने कहा,—इन लाखों रुपये का तुम क्या करना चाहते हो? कौन सी वह वस्तु है जिसे पाकर तुम सबसे अधिक खुश होगे?

इस सवाल पर उस करोड़पति को ज्यादा सोचना नहीं पड़ा। उसने कहा मैं रहने के लिए एक सुंदर घर लेना चाहता हूँ। जिसका आस-पड़ोस भी सुंदर हो। करोड़पति को

सुंदरता की सबसे अधिक चाह थी। वह ऐसे स्थान पर रहना चाहता था जो देखने में सुंदर खुले आकाश के नीचे समुद्र के टापुओं या जंगल के सुंदर भाग में हो। और हकीकत में इन सारी खूबियों वाला स्थान अंडमान और निकोबार में रहने वाले बच्चों को उनके चारों ओर मौजूद है। इसलिए वे करोड़पति हैं, और वो भी बिना लॉटरी जीते और बिना ईर्ष्यालु दोस्तों और टेलीविजन रिपोर्टरों के सलाह और लॉटरी जीतने के सिरदर्द के।

इसमें कोई भी संदेह नहीं कि अंडमान और निकोबार इस पृथ्वी के सर्वाधिक सुंदर और मनोहारी स्थानों में से एक है। इसकी सुंदरता की प्रशंसा कविताएँ, उपन्यास, चित्रकला, फोटोग्राफ्स, लेखों और भाषणों के माध्यम से की गई है। इसके लिए कई काव्यात्मक नामों का भी इजाद किया गया, जैसे—भाग्यशाली, एमराल्ड आइजल्स, समुद्र का गहना, स्वर्ग का द्वीप तथा और भी कई नाम। इस द्वीप का नाम अंडमान और निकोबार कैसे पड़ा इसके बारे में भी अलग-अलग सिद्धांत हैं। हम भारतीयों का मानना है कि यह 'मलय' भाषा के शब्द 'हंदुमान' से बना है। मलय भाषा में हनुमान को हंदुमान उच्चारित करते हैं। स्पष्टतः मलय गुलामों ने अंडमान के लोगों को राक्षस कहा जबकि हनुमान 'रामायण' के पात्र हैं। यह भी हो सकता है कि यह नाम इस द्वीप के पुराने नाम 'अंगमनियन' से निकला हो। नौवीं सदी के अन्वेषकों और खोजकर्ताओं ने अंडमान को इसी नाम से संबोधित किया है। इससे भी पहले दूसरी सदी में यहाँ आए खोजकर्ता क्लाउज्यिस टॉलेमी ने अंडमान के निवासियों को 'अग्मानेट' एवं निकोबारी को 'एन्थ्रोपोलागी' कहा। प्रत्येक लेखक ने इस द्वीप का अलग नाम दिया है तथा उसे सही प्रमाणित करने के लिए उनके पास अलग कहानी भी है। उदाहरण के लिए, एक पुस्तक के अनुसार 'नारकोंदम' मलय भाषा का शब्द है जबकि दूसरे का कहना है कि यह संस्कृत भाषा के नरक कुंड शब्द से आया है। पहले आने वाले यात्रियों द्वारा निकोबार को 'नंगे लोगों की भूमि' कहा गया। संभवतः यहाँ से भी इस द्वीप के नाम की उत्पत्ति माना जा सकता है। क्योंकि हिंदी में नंगे लोगों को 'नक्कावुर' कहा जाता है। पुराने जमाने में इस द्वीप की खोज और अन्वेषण करने वालों के सामने कई कठिनाइयाँ थी। मसलन, नए स्थानों का पता लगाना, उनके बारे में विस्तार से बताना तथा पहली बार
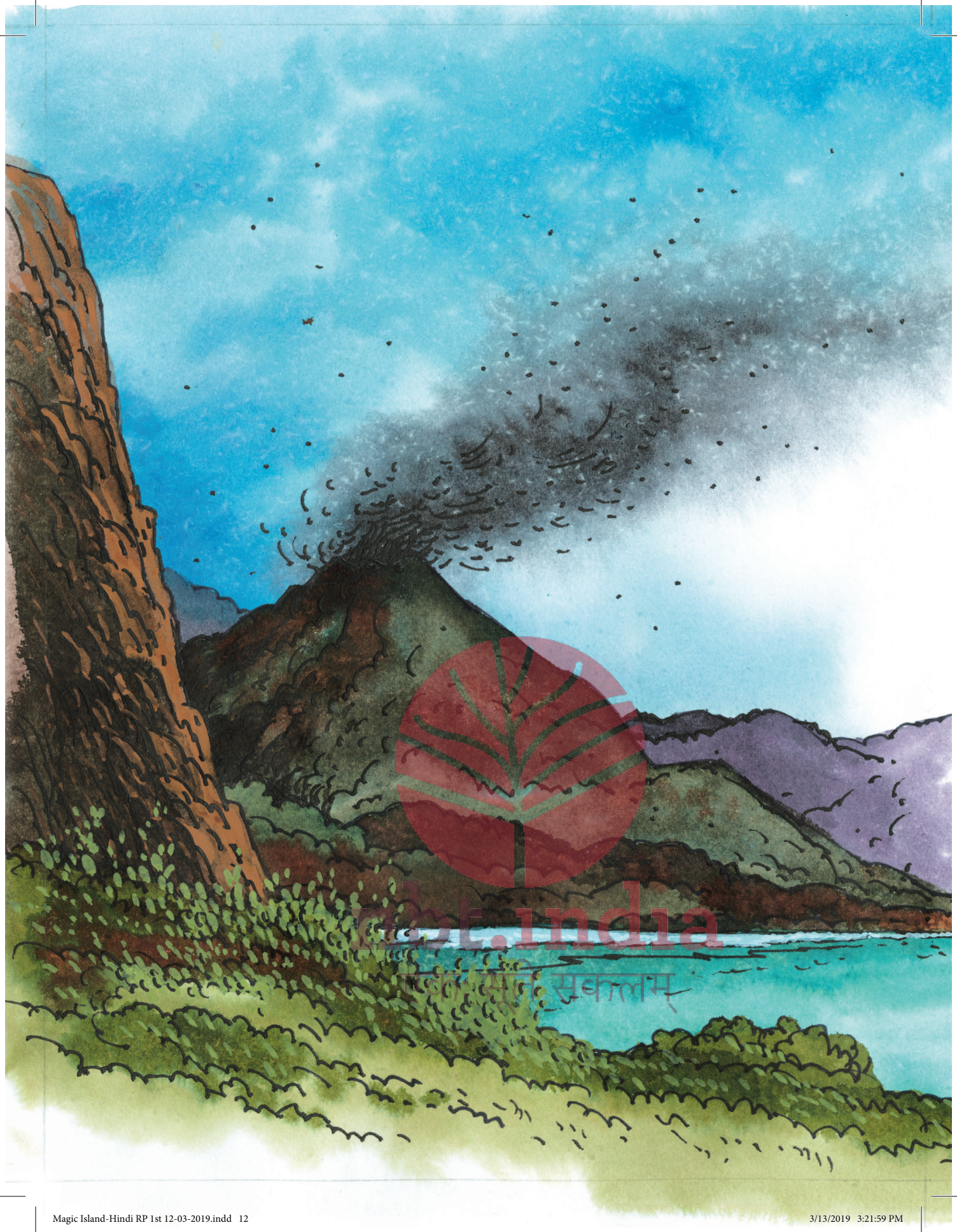
उसका नाम रखना। चूँकि उन जगहों पर कोई जाना नहीं चाहता था इसलिए उन्होंने उसके बारे में अपने हिसाब से बढ़ा-चढ़ाकर लिख दिया।

किंतु अंडमान और निकोबार का वास्तविक महत्व उसकी सर्वाधिक सुंदरता है। इसका बेजोड़ सौंदर्य इसे खास जगह का दर्जा दिलाता है जिसकी हिफाजत हमें हर कीमत पर करना चाहिए। क्यों? इसका जवाब है कि—भूवैज्ञानिकों एवं भूगोल की जानकारी रखने वालों के अनुसार अन्य बातों से परे, भारत की एकमात्र ज्वालामुखी यहीं अवस्थित है। प्राणि विज्ञानियों का उत्तर है कि—इस द्वीप पर ऐसे सैकड़ों स्तनधारी, पक्षी, रेंगनेवाले तथा जल और स्थल में रहने वाले जीव-जंतु हैं जो धरती पर कहीं और

नहीं पाए जाते हैं। वनस्पतिशास्त्री तकरीबन 200 स्थानीय फूलों की प्रजातियों के बारे में बताते हैं लेकिन सबसे महत्वपूर्ण वक्तव्य मानव विज्ञानियों तथा पारिस्थितिक विज्ञानियों का होगा। मानव-विज्ञानियों का जवाब है कि—देखिए, आप यहाँ पाए जाने वाले देशज मेंढक और पक्षियों को भूल जाइए; यहाँ स्थानीय (देशज) मानव भी हैं। यहाँ अंडमानी, जारवा, सेंटीनलीज, शोम्पेन, ओंग, तथा निकोबारी इत्यादि स्थानीय संस्कृतियाँ हैं जो इस छोटे से स्थान पर पाई जाती है, जिसका दुनिया में कहीं और वजूद नहीं है।

और सबसे महत्वपूर्ण तर्क देने वाले पारिस्थितिक-विज्ञानी अपनी बात रखने को बेताब हो रहे हैं—इनके अनुसार—अंडमान-निकोबार जैव विविधता वाला दुनिया के प्रमुखतम द्वीप समूहों में से है। जैव विविधता वाला क्षेत्र उस जगह को कहते हैं जहाँ विभिन्न प्रकार के जीव-जंतु और पेड़-पौधे एक साथ पाए जाते हैं। ठीक इसी तरह प्रमुख-स्थान का मतलब उस विशेष क्षेत्र से है जहाँ जैव-विविधता बहुत उच्च हो यानी किसी क्षेत्र विशेष में ही जीव-जंतुओं और पेड़-पौधों की हजारों प्रजातियाँ पाई जाती हो। किसी भी अर्ध-शहरी क्षेत्र में जैव-विविधता निम्न स्तर की होती है। यहाँ हम एक-दो गिलहरी-चिड़िया, कुछ जीव-जंतु, मेंढक तथा एक-दो पेड़-पौधे पाए जाते हैं। लेकिन अंडमान-निकोबार जैसे उच्च जैव-विविधता वाले क्षेत्र के वर्षा वन में विभिन्न प्रजातियों के जीव-जंतुओं, पक्षियों, पौधों, सरीसृपों, उभयचरों एवं स्तनधारियों का जनसंख्या विस्फोट है। दरअसल यहाँ के वर्षा वनों में दुनिया के अन्य पारिस्थितिक तंत्र की ही तरह उच्च स्तर की जैव-विविधता है। इस जादुई द्वीप पर अभी भी कुछ ऐसे वर्षा वन हैं।

एक दोपहर को मैं और अन्नामलाई उत्तरी अंडमान में वर्षा वन में चुपचाप खड़े थे। तकरीबन तीस मीटर ऊपर से किसी पेड़ पर बैठा उल्लू रो रहा था। लग रहा था जैसे वह दिन में जगा दिए जाने के कारण दुःखी हो। उसकी खोज का कारण उड़ने वाले लोमड़ियों या गाटुर का एक दल था जिन्होंने कोहराम मचाया हुआ था। हमारे सिर के ऊपर जो छतरी जैसी कैनोपी बनी थी उसमें अन्य प्रकार के पक्षी भी थे जैसे कि टुइयाँ तोता, कबूतर तथा बारबेटस। एक कठफोड़वा कीड़े-मकोड़े के शिकार में लगा था। वह अपने चोंच से पेड़ के तने पर इतनी तेज चोट कर रहा था जो किसी को भी सिरदर्द

कराने के लिए काफी था। कठफोड़वा इस जानलेवा आवाज को बर्दाश्त कर सकता है, क्योंकि इनकी खोपड़ी में एक मुलायम पदार्थ होता है जो सिर पर लगने वाले प्रहार को बेअसर कर देता है तथा इस प्रकार वह कोमा में जाने से बच जाता है।

पेड़ पर हमने बहुत समय बिताया एवं कैट स्नेक, चार तरह की छिपकली, कई कीड़े एवं कुछ सुंदर तितलियाँ भी देखे। एक विशाल पतंगा एकदम स्थिर बैठा ऐसा लग रहा था मानो वह पेड़ की टहनी का ही हिस्सा हो। कीचड़ वाली जमीन पर भूखे मेंढक और जोंक हमारे पैर की तरफ झपट रहे थे। अंजीर के पेड़ और उसकी टहनियों पर कम से कम पचास प्रकार के छोटे-छोटे जानवर लदे थे। ऐसा लग रहा था जैसे इनकी अलग ही एक छोटी सी दुनिया हो।

इस अजूबे अंडमान-निकोबार द्वीप समूह पर वर्षा वन यहाँ पाए जाने वाले पारिस्थितिक-तंत्र का एक महत्वपूर्ण नमूना है। यहाँ मैनग्रोव पट्टियों के अतिरिक्त पेड़ से लटकती हुई जड़ें ऐसी प्रतीत होती है मानो लोगों का समूह हाथ हिला रहा हो और नृत्य कर रहा हो।

मैनग्रोव पेड़ विशेष प्रकार के होते हैं जो समुद्री जल और नमकीन मिट्टी पर होता है। यह सामान्य वृक्षों के लिए खतरनाक और घातक दोनों है। इन्होंने अपने अंदर विशेष प्रकार के अवयव विकसित कर लिए हैं जो नमकीन परिवेश में रहने का अभ्यस्त होता है। उदाहरण के तौर पर अजीब सा दिखने वाला, उसे स्थिर रखने वाले मूल-जड़ में छिद्र होता है जिससे वह साँस लेता है क्योंकि यहाँ की मिट्टी में बहुत कम मात्रा में ऑक्सीजन पाया जाता है। इनकी पत्तियाँ तथा जड़ें नमक को छान लेती हैं। इसी कारण इनकी पत्तियों का स्वाद बहुत खारा होता है।

मैनग्रोव वन तथा उसके आस-पास की खाड़ियाँ नमकीन पानी में पाए जाने वाले मगरमच्छों का घर है। इस द्वीप का सबसे बड़ा परभक्षी यह मगरमच्छ दुनिया के सबसे बड़े सरिसृपों में से एक है। खारे या नमकीन पानी में पाए जाने वाले इस जीव की अधिकतम लंबाई 7 मीटर तक होती है। वैसे औसत रूप से यह तीन-चार मीटर का होता है। आकार में बड़ा होने के बावजूद यह कुछ दूर तक घोड़े की गति से तेज और

सरपट दौड़ सकता है। ये पर्यावरण को स्वस्थ एवं संतुलित रखने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। इनका मुख्य भोजन परभक्षी मछली हैं जिससे सीधे तौर पर मानव को फायदा होता है। दरअसल परभक्षी मछलियाँ उन छोटे प्रजातियों की मछलियों को खा जाती हैं जिसे हम पसंद करते हैं। ऐसा कई देशों में देखा गया है कि मगरमच्छों की संख्या कम हो जाने से पकड़े जाने वाले मछलियों की मात्रा कम हो जाती है और मछली उद्योग को भारी नुकसान होता है।
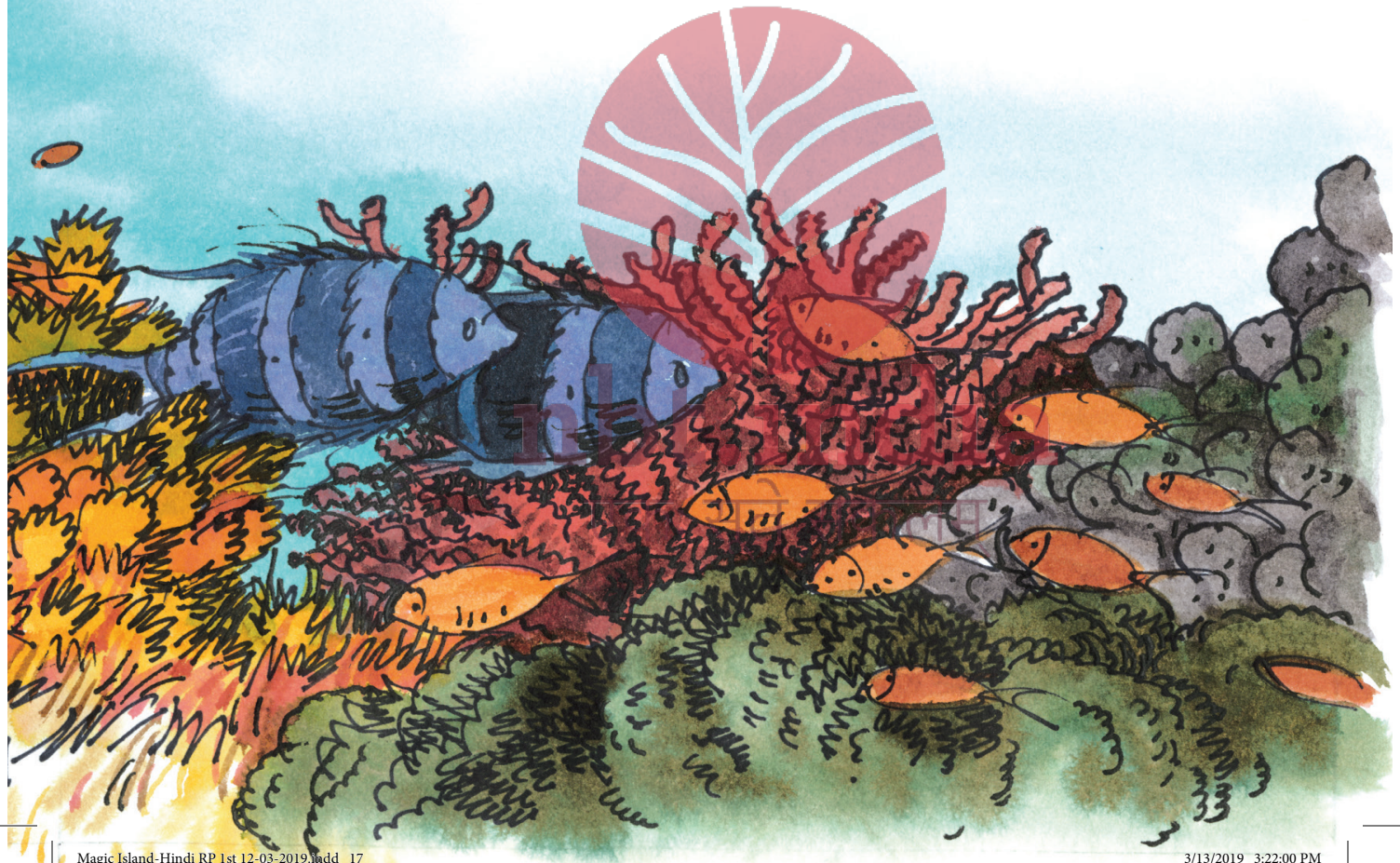
मैनग्रोव वन के अतिरिक्त समुद्र तट ऐसी जगह है जहाँ की सफेद रेत दूर से देखने पर बर्फ की अंगूठी की तरह दिखाई देती है। यही वह जगह है जहाँ समुद्री कछुए अपना घोंसला बनाते हैं। अंडमान और निकोबार में समुद्री कछुए की चार प्रजातियाँ पाई जाती हैं—हरे, ओलिव रिडली, हाउकबिल तथा जाएंट। जाएंट कछुए तो तकरीबन 1,000 किलो के होते हैं इसीलिए इन्हें लेदर बैग भी कहा जाता है। समुद्री कछुओं का जीवन भी कम रहस्यपूर्ण नहीं है। वैज्ञानिकों ने इनके बारे में जानने के लिए खोज एवं अनुसंधान पर करोड़ों डॉलर तथा पर्याप्त समय लगाया है। इसके बावजूद इनसे संबंधित बहुत ऐसे सवाल हैं जो अभी तक अनुत्तरित हैं। हम मानव हर छोटे-छोटे जीव-जंतुओं के बारे में हर छोटी-छोटी बातों को जानने का पूरा प्रयास करते हैं। हालाँकि कुछ चीजों को रहस्य ही रहना चाहिए और वे भविष्य में भी रहस्य ही रहेंगी। मनुष्य जब चंद्रमा पर पहुँचा तो दुनिया भर के लोग यह मानने लगे कि विज्ञान ने हमसे स्वर्ग के काव्यात्मक रहस्य को छीन लिया है। क्या आप इस बात से सहमत हैं?

क्या आपने समुद्री कछुए के रहने के स्थान को कभी देखा है? यदि आपको कभी इसका मौका मिले तो मत चूकना। द्वीपों में इसके घोंसला बनाने का मौसम अक्तुबर से मार्च तक होता है। इस दौरान समुद्री जानवरों का द्वीप पर घुमना-फिरना दुश्वार हो जाता है। मादा समुद्री कछुए को इस दौरान कुछ ज्यादा महत्वपूर्ण काम करना होता है। उसे रेत में सुरंग बनाकर उसमें 100 से 200 तक अंडे देने होते हैं। फिर उन्हें ढककर वह नकली घोंसला (परभक्षियों को बेवकूफ बनाने के लिए) बनाती है तथा पूरी तरह थक कर फिर से समुद्र में वापस चली जाती है। कछुए का बच्चा इडली या पूरी के आकार का और बहुत भारी भी नहीं होता है। साठ दिनों तक अंडे में रहने के बाद वह उससे निकलकर रेंगता हुआ समुद्र में चला जाता है। कछुओं के बारे में सबसे बड़े रहस्यों में से एक यह है कि वह अपने अंडे हमेशा उसी किनारे पर ठीक उसी घोंसले में देती है जिसमें उसने बहुत पहले अंडा दिया था। वह उस जगह पर दोबारा कैसे आ जाती है? वह उन रास्तों को कैसे याद रखती है? जबकि समुद्र इतना विशाल है और हो सकता है वह घोंसले से हजारों मील दूर रहती हो। निश्चित तौर पर उनके पास कोई ऐसी तकनीक है जो मानव मस्तिष्क के समझ के परे है।

मगरमच्छों और समुद्री कछुओं के अंडे के बारे में वैज्ञानिकों ने एक खोज किया है जो बड़ा ही रोचक है। हम यह माना करते थे कि घोंसले में नर या मादा सदस्यों की संख्या, या नर-मादा अनुपात उत्पत्ति ग्रंथी या भ्रूण द्वारा या अंडे सेने की प्रक्रिया से निर्धारित होता है। लेकिन हाल के अध्ययन से यह पता चला है कि मगरमच्छ और समुद्री कछुए दोनों ही जानवरों में शिशु नर-मादा का होना इनके घोंसले के तापमान पर निर्भर करता है। क्या यह जिज्ञासा पैदा करने वाली नहीं है? मूल प्रकृति घोंसले के तापमान को नियंत्रित कर यह निर्धारित करती है कि कितनी संख्या में नर और मादा शिशुओं का प्रजनन होगा।

सुंदर समुद्र तट के परे रंगीन समुद्री चट्टान (मूंगे का पहाड़) है जो अपनी आकृति में बहुमूर्तिदर्शी (कलाइडोस्कोप) की तरह दिखता है। इस द्वीप समूह का पानी एकदम साफ है जिसके कारण हम बिना पानी में उतरे किनारे से ही इन चट्टानों और मछलियों को देख सकते हैं। संभवतः आपने समुद्री चट्टानों से संबंधित ढेरों पोस्टर, तस्वीरें व पुस्तकें देखी होंगी। वानडूर में वन विभाग की प्रदर्शनी में समुद्री चट्टानों एवं 'समुद्र के वर्षा वनों' से संबंधित पौधों व जानवरों की ढेरों प्रजातियों को दर्शाया गया है। यह चार स्तर का पारिस्थितिक तंत्र—वर्षा वन, मैनग्रोव्स, समुद्र तट और समुद्री चट्टान अंडमान-निकोबार द्वीप की खूबी है। इन सब का एक-दूसरे के बिल्कुल निकट होने के कारण ही इस द्वीप पर उच्च स्तर की जैव-विविधता है जो विश्व की जैव-विविधता वाले स्थानों में उच्चतम स्तर का है।

जंगली नहीं प्रतिभावान

हम अंडमान और निकोबार द्वीपों में रहने वाले उन जंगली जारवा और ओंग नामक आदिवासी प्रजातियों की बात कर रहे हैं जिन्हें हम मूर्खतापूर्ण आदतों से जंगली कहते हैं। अगर हम उन्हें जंगली कह कर हेय दृष्टि से देखते हैं, तो जंगली कहलाने वाले हम होंगे, वे नहीं। पूरे विश्व के समाज वैज्ञानिक (जो मनुष्य और उनकी—संस्कृतियों का अध्ययन करते हैं) यह जानकर हैरान हैं कि ये देशज लोग अपने वातावरण के बारे में कितना जानते हैं और कितनी कुशलता से उसका इस्तेमाल करते हैं। आत्मनिर्भर होना कोई आसान बात नहीं है। हम अपनी जरूरतों को पूरी करने के लिए दुकानों तक दौड़ लगाने के आदि हो गए हैं, लेकिन शोमपेन और सेनटाइनलीस जैसी आदिवासी प्रजातियों को चीजें खोजकर या बनाकर अपनी हर जरूरत खुद पूरी करनी होती है। इन जरूरतों में खाना-पीना, कपड़े, दवाइयाँ, गहने, हथियार, मनोरंजन और खेल की चीजें शामिल हैं।

यह सब आसान नहीं है! आप ऐसे द्वीप पर जहाँ लोगों का निवास नहीं है, कितने दिनों तक रह सकते हैं? एक से दो दिन, या अधिक से अधिक एक सप्ताह। सबसे पहले हमें क्या करना होगा? हमें अवश्य ही सबसे पहले एक छत की जरूरत होगी। यह सुनने में आसान जरूर लगता है लेकिन हमें जल्द ही पता लग जाएगा कि अपने छत को सहारा देने के लिए लकड़ी काटने जैसा साधारण काम भी कम मुश्किल नहीं होता है। आपने कभी एक टहनी भी काटने की कोशिश की है? इसके लिए भी हमें तेज धार वाले औजार और मजबूत मांसपेशियों की जरूरत होगी। अगर हमने लकड़ी काट भी ली है तो पत्तियों को साथ बुनकर छत कैसे बना पाएँगे? हमें लताओं के खालों

से धागे बनाना कैसे आएगा, या हमें यह कैसे पता चलेगा कि बिलौर का फाहा छीलने और काटने का काम आ सकता है। या इसके ऊपरी सतह या इसके खाल का हम चाकू बनाकर इस्तेमाल कर सकते हैं। यह कहना गलत नहीं होगा कि हम पेड़ की खालों से चटाइयाँ बुनने में असफल हो जाएँगे। हम इन सब चीजों को बुरी तरह गड़बड़ कर देंगे और पहली ही रात हमारी छत हमारे ऊपर ही गिर जाएगी।

तब हम बहुत भूखा महसूस करेंगे और उस घटिया खाने (जंक फूड) को भी याद करेंगे जो हमारे स्वास्थ्य के लिए बहुत हानिकारक होता है। इसके बाद भी हमें उसकी लत लगी हुई है। हम फिर किसी पक्षी या सुअर को मारकर खाने का विचार कर शिकार पर निकलेंगे, लेकिन ठोकर खाकर या गिरकर हम जरूर हार मान बैठेंगे। अंत में निर्भीकतापूर्वक हम वहाँ से गुजर रहे केंकड़े को पकड़कर उसे खाने की सोचेंगे, और फिर अचानक हमें याद आएगा कि हमें तो आग जलाना आता ही नहीं। जब हमारे स्कूलों में रेखा गणित व अन्य चीजें सिखाई जाती हैं, वहाँ भी हमें इस तरह की चीजें नहीं सिखाई जाती; जैसे—तेजी से एक बसेरा बनाना, आग जलाना, या बिना घड़ी के समय का अनुमान लगाना। आपको ऐसा नहीं लगता कि ये सब चीजें भी सिखाई जानी चाहिए? तो अब हमें यह बात मान लेनी चाहिए कि हम जंगल में रहने लायक नहीं हैं। हमें अपने-आपको याद दिलाते हुए यह मान लेना चाहिए कि अंडमान और निकोबार द्वीपों में रहने वाले आदिवासी केवल जंगलों में जिंदा ही नहीं रहते बल्कि मनोरंजन और अपने कार्यों में व्यस्त जिंदगी जीते हैं। जो नृत्य-संगीत, धार्मिक विश्वास, रिश्तेदारी, दोस्ती और उन सब चीजों से भरा है जो हमारी जिंदगी को रंगीन और खुशहाल बनाते हैं। हम आदिवासियों को ऐसा समझने की भूल करते हैं जैसे वे कठोर और बिना दिल वाले लोग होते हैं। जिनके पास दोस्ती या रिश्तेदारी के लिए समय या रूचि नहीं हैं। यह सब बातें सच से बहुत दूर हैं। उनका मिलने और बिछड़ने का रिवाज बहुत भावुक होता है। उनकी आँखों में बहुत जल्द आँसू आ जाते हैं। वे अपने दांपत्य जीवन का निर्वाह पूरी जिंदगी तथा पूरी प्रतिबद्धता से करते हैं। हालाँकि इसका समारोह सामान्य और साधारण होता है।

अगर आप किसी द्वीप के निवासी हैं तो यह महत्वपूर्ण है कि आप वहाँ के मूल निवासियों के बारे में ठीक उसी तरह जानें जैसे अपने घर के बारे में जानते हैं। यदि आप भी उसी द्वीप के रहने वाले हैं तो आपके लिए जरूरी है कि आप आदिवासियों के बारे में जानें, क्योंकि वह भी हमारे साथ रहने वाले साथी हैं जो सम्मानपूर्वक हमारा साथ और सहानुभूति चाहते हैं। इस द्वीप समूह में रहने वाले बच्चे जारवा जाति के आदिवासियों की कहानी सुनकर बड़े हुए हैं और उन्होंने ओंग, शोमपेन और निकोबारियों को देखा है। अगर आप भी अंडमान और निकोबार गए होंगे तो अवश्य ही वहाँ, वहाँ रहने वाले आदिवासियों को देखा होगा। जारवा, सेनटाइनलीस और ओंग निग्रीटो प्रजाति के लोग हैं जबकि निकोबारी और

शोमपेन भारतीय-मंगोलीय प्रजाति के हैं। आइए हम अंडमान और निकोबार द्वीपों में रहने वाली छह प्रजातियों के बुनियादी तथ्यों के बारे में जानें। इन आदिवासियों के साथ हमारे तकरीबन 200 साल पुराने संबंध होने के बावजूद इनके बारे में हमारे पास इतनी कम जानकारी है जिसे हास्यास्पद कहा जा सकता है। इनके बारे में जो कुछ भी लिखा गया है वह जरूरी नहीं कि सच हो। ऐसे बहुत से मनुष्य के बारे में अध्ययन करने वाले लोग हैं जो अध्ययन और विचारों से सबको गलत जानकारी देकर उन्हें बरगलाते हैं। उदाहरण के तौर पर यदि काफी समय तक ध्वनि तख्त को देखें तो भ्रम से वह ढाल दिखने लगना है। इसी तरह बाँस के बने खाने जिसे मांस-मछली रखने के काम में लाया जाता है, चूल्हा या भूनने वाली अंगीठी मान लिया गया।

अब हम जारवा जाति से शुरुआत करते हैं जिनके बारे में हाल के दिनों में काफी चर्चा रही और ये समाचारों में सुर्खियों में छाए रहे। कोई नहीं जानता कि ये कहाँ से आए और अंडमान में कितने समय से रहते हैं। यह समय 20 या 30 हजार साल का भी हो सकता है। मानवों के बारे में अध्ययन करने वाले विज्ञानी, आदिवासियों के उद्गम को लेकर बहस करते रहे हैं। जारवा जाति निश्चित तौर पर निग्रीटोस है, इस प्रजाति के ज्यादातर लोग अफ्रीकी देशों में पाए जाते हैं। निग्रीटोस सामान्यतया छोटे कद के होते हैं, उनका रंग काला और सुंदर होता है। उनके बाल घुंघराले होते हैं जिसे ज्यादातर औरतें पसंद करती हैं। ऐसे लोग लंदन और न्यूयॉर्क जैसे बड़े शहरों में काफी लोकप्रिय हैं। जारवा और सेनटाइनलीस जाति के आदिवासियों को केस प्रसाधकों के पास जाकर बड़ी रकम खर्च करने की जरूरत नहीं होती क्योंकि वे ऐसे फैशनप्रिय बालों के साथ जन्म ही लेते हैं।

जारवा जाति के आदिवासियों ने जितना हो सका बाहरी दुनिया से दूर रहने की ही कोशिश की है। जब भी वे उकसाए या भड़काए गए हैं, उन्होंने इनका जवाब अपने तीरों से दिया है। बहुत दुःख की बात है कि हमने उनकी इच्छाओं और भावनाओं की कद्र नहीं की। इस वजह से आज हमारा सबसे बुरा भय सच हो गया है कि ये आदिवासी अपने ही घर में भिखारी और आवारा फिरने वाले बन गए।

जारवा जाति के लोग अपने सीने को किसी प्रहार से बचाने के लिए खाल का ढाल पहनते हैं जिसमें वे तीर, और चाकू जैसे छोटे हथियार भी रखते हैं। महिलाएँ कमरबंद पहनती हैं जिसमें पत्तियों की फुदनी लटकी होती है। बच्चे ज्यादातर बिना कपड़े के रहते हैं जिससे उन्हें समुद्र में तैरने और पेड़ों पर चढ़ने में आसानी होती है। इससे उन्हें कपड़े गंदे होने और फटने की चिंता भी नहीं होती। गहने जैसे कमरबंद, सरबंद, अस्त्र-सस्त्र और गले में पहनने वाली हार इत्यादि सख्त खोपड़ियों, पत्तियों, पेड़ों की छाल या अन्य वन्य पदार्थों से बनाई जाती हैं। नायलॉन के तार जो कि समुद्र तटों पर पाया जाता है, जारवा जाति के आदिवासियों के पहनावे और आभूषण का अहम हिस्सा बन चुका है, जैसे सरकार द्वारा उन्हें भेंट किए गए लाल कपड़े।

जारवा लोग अपने ज्यादातर समय भोजन इकट्ठा करने में बिताते हैं। इनका रसोई और बाजार दक्षिण और मध्य अंडमान द्वीप का पश्चिमी तटीय क्षेत्रों के आसपास है। इनमें लंबा समुद्र तट, वनस्पति क्षेत्र व वन शामिल हैं। धीमे बहाव की वजह से ये यहाँ मछलियाँ, केंकड़े और शंख मीन पकड़ते हैं। वे जमीन खोदकर कंद-मूल निकालते हैं। इसके साथ ही अरबी, पेड़ों की जड़ें आदि भी ये खाते हैं। बीमारी या खाँसी होने पर जारवा लोग जंगली अदरक से बनी दवाइयों का प्रयोग करते हैं। उनके सख्त और हट्ठे-कट्ठे शरीर को देखकर ही हम उनकी तंदुरुस्ती और उनके लाजवाब आहार के बारे में अनुमान लगा सकते हैं। ऐसा कहा जाता है कि उनके दाँत औजारों के डिब्बे के समान होते हैं जो कुछ भी काट, चीर, चबा और कुचल सकते हैं।

आदिवासियों की दूसरी प्रजाति है सेनटाइनलीस, जो उत्तर सेनटाइनल द्वीप में रहते हैं। वे इस दुनिया के सभी जातियों में सबसे अलग रहने वाले और शुद्ध मानव प्रजाति के लोग हैं। वे कहाँ से आए हैं और कौन हैं? संभवतः वे अंडमान के निवासी हैं जो जारवा से लंबे हैं और उनके लक्षण और गुण भी जारवा जाति से अलग हैं। हालाँकि उनके अलग-थलग रहने का गुण जारवा जाति से मिलता है। समाज विज्ञानियों का मानना है कि सेनटाइनलीस यहाँ 15 से 20 हजार वर्ष पहले आकर बस गए थे और उनकी जनसंख्या का अनुमान 110 वर्ष पहले लगाया गया। हकीकत यह है कि हमारे

पास उनके बारे में अधिक जानकारी नहीं है। बाहरी दुनिया में घसीटे जाने को लेकर उनका इनकार, काबिले तारीफ है। यह एक शानदार बात है कि उत्तरी सेनटाइनल द्वीप में जो 60 स्क्वायर मील की दुनिया बसी है, वे उसे ही अपना घर मानते हैं। वे समुद्र के धीमे बहाव में नावों में घूमते हुए शंख-मीन और मछलियाँ पकड़ते हैं। वे पेड़ों पर छिपकर बाहरी लोगों पर हमला करते हैं। यह अलग-थलग रहने वाली और विस्मयकारी जनसंख्या हमारे लिए एक अद्भुत खजाने के समान है। हमें जितना हो सके इसकी देखभाल और सुरक्षा करनी चाहिए। अंडमान के निवासी जिनके करीब एक दर्जन गोत्र हैं, जैसे—*येरेगा* और *अका-बीआ,* ऐसे पहले स्थानीय लोग थे जो बाहरी दुनिया के संपर्क में आए। ऐसा तब हुआ जब अंग्रेजों ने दक्षिणी अंडमान में सन् 1858 में खंड व्यवस्था स्थापित कर दिया। उस समय अंडमान निवासियों की जनसंख्या चार से पाँच हजार के बीच थी, हालाँकि इसकी हमें सटीक जानकारी नहीं है। हर गोत्र और समूह की संस्कृतियाँ और भाषाएँ अलग-अलग थी। हालाँकि विभिन्न गोत्रों के बीच थोड़ा संपर्क था और वस्तुओं की अदला-बदली भी होती थी, परंतु वे अलग जिंदगी जीते थे। कुछ समुद्र के किनारे रहते थे और कछुए और मछलियाँ पकड़कर जीवन-यापन करते थे जबकि मुख्य-भूमि पर निवास करने वाले वन्य-उत्पादों के सहारे गुजारा करते थे। वे पक्षियों और जानवरों का शिकार करने में निपुण थे। वे विभिन्न प्रजातियों के जीवों के आकार, आदतें और उनकी गति के हिसाब से अलग-अलग प्रकार के बाण का प्रयोग करते थे। उदाहरण के लिए यदि उन्हें सूअर का शिकार करना होता तो वे भारी और काँटेदार पत्तियों वाला बाण प्रयोग करते थे।

जब उन्होंने अपने आवास के आस-पास घूमने वाले आवारा कुत्तों को पालतू बनाया, उसके बाद उनके शिकार करने के तरीके में नाटकीय बदलाव हुए। उन्होंने इन कुत्तों को दलों में बाँटकर बड़े-बड़े शिकारों जैसे गोह-सूअर के शिकार में उपयोग किया।

इनके शिकार करने के तरीके में दूसरा बड़ा बदलाव तब आया जब अंडमान के निवासी व अन्य आदिवासियों ने लोहे की खोज की। लोहे ने जल्द ही इनके हथियारों और शिकार करने वाले औजारों में लगने वाले सख्त कवच, मछली की हड्डियाँ, लकड़ी

और पत्थरों की जगह लेकर मछली मारने वाले भाले की नोंक अब लोहे की बनने लगी जिसे पत्थरों द्वारा रेंत और रगड़कर आकार दिया जाता था। जहाजों के अवशेषों से उपलब्ध पर्याप्त लोहे ने अंडमान और निकोबार में रहने वाले आदिवासियों की संस्कृति ही बदल डाली। जारवा के विपरीत, अंडमान के निवासियों को आग जलाना नहीं आता था। इसके कारण उन्हें शिकार करने वाले एक डेरे से दूसरे डेरे तक सुलगता हुआ लक्कड़ ले जाना पड़ता था। अग्नी को स्वर्ग से कैसे चुराकर लाया गया—यह उनकी पौराणिक कथाओं में से एक है। ऐसी कथा हर पौराणिक संस्कृति में पाई जाती है।

अंडमानी जनजाति के अचानक और त्रासद मौत के कारण हमें उनकी संस्कृति और आदतों के बारे में अधिक जानकारी नहीं मिल सकी। हमेशा की तरह हम उनसे कुछ सीखने के बजाय उन्हें सभ्य बनाने में लगे रहते थे। विशेष रूचि के लिए मैं यहाँ अंडमानी जनजातियों की सिर्फ दो खासियतों का जिक्र करूँगा। पहला—''शरीर पर की जाने वाली चित्रकारी'' जो कि कछुआ उत्सव जैसे खास अवसरों पर किया जाने वाला महत्वपूर्ण रिवाज है। इसमें एक प्रकार की चिकनी मिट्टी का प्रयोग किया जाता है जिसमें लोगों का मानना है कि औषधीय गुण होते हैं। दूसरा प्रमुख रिवाज है बलिदान देना—जिसमें लोग पत्थर और काँच के टुकड़ों से अपनी चमड़ी काटते हैं। बलिदान देने के पीछे चिकित्सीय अवधारणा यह है कि इस दौरान खून के निकलने से शरीर ताकतवर होता है और शरीर में जो नया खून बनता है वह बीमारियों की रोकथाम करता है। अट्ठारहवीं और उन्नीसवीं सदी तक जोंक अंग्रेजी डॉक्टरों के उपकरणों का अहम हिस्सा था तथा डॉक्टर मरीजों का इससे नियमित इलाज करते थे।

अब हम छोटे से अंडमान द्वीप के दक्षिण की तरफ बढ़ते हैं जहाँ एक अन्य मंत्रमुग्ध कर देने वाली प्राचीन संस्कृति के साथ ओंग नामक जनजाति निवास करती है। इनका घर छोटे से अंडमान द्वीप के व्यस्त समुद्री मार्ग पर स्थित है। इस द्वीप से समुद्री डाकुओं और दास व्यापार से जुड़े जहाजों का आना-जाना लगा रहता था। इसके कारण ये लोग जहाजों और उस पर सवार लोगों के प्रति शंकालु रहते थे। चूँकि अंडमान और निकोबार द्वीप का प्रारंभिक इतिहास नहीं है इसलिए हमें यह नहीं मालूम कि कितनी ओंग जाति

के लोगों को दास बनाकर ले जाया गया या उन पर कितने अत्याचार किए गए। लेकिन निश्चित तौर पर अंडमान मलय डाकुओं और दास व्यापार से जुड़े जहाजों का अड्डा था। जब भी जहाज के लोग पानी या जहाज की मरम्मत के लिए यहाँ उतरते—ओंग उसका प्रतिरोध करते थे, बदले में जहाज के लोग इन्हें कठोर सजा देते थे। अंग्रेज सरकार के एक इसी तरह के हमले में सत्तर ओंग आदिवासियों को मार दिया गया था और इस ''बहादुरी'' के लिए अंग्रेज सरकार ने पाँच अफसरों को विक्टोरिया क्रॉस से सम्मानित किया था।

हम जारवा या अंडमानियों से कहीं अधिक ओंग जाति के विचार, विश्वास और भाषाओं और आदतों के बारे में जानते हैं। ऐसा इसलिए क्योंकि इटली के मानव शास्त्री लीडिओ किपरियानी सहित कई मानव विज्ञानियों ने इनके साथ रहकर इनकी संस्कृति का अध्ययन किया है। ओंग जाति की जंगल और इसके संसाधनों के बारे में लाजवाब जानकारी के बारे में इन्होंने काफी कुछ लिखा है। उदाहरण के तौर पर, वे एक विशेष पौधे का उपयोग मधुमक्खियों को उसके छत्ते से भगाने के लिए करते हैं। जंगली शहद विटामिन और मिनरल से भरपूर तथा पौष्टिक होता है। ओंग जाति के लोग शिकार करने और मछली पकड़ने के लिए विश्व प्रसिद्ध हैं। वे मछली पकड़ने के लिए जाल या मछली मारने वाले भाले का नहीं बल्कि तीर-धनुष का प्रयोग करते हैं। वे तेज समुद्री लहरों में उछलती मछलियों पर भी निपुणता से निशाना लगा लेते हैं।

ओंग काफी गर्मजोशी और स्नेहपूर्वक व्यवहार करने वाले लोग हैं। उनके मिलने का तरीका 'हाय' करने और मुस्कुराने से कहीं अधिक आत्मीय है। वे एक-दूसरे की गोद में बैठकर प्रेम से स्पर्श करते हैं और यहाँ तक कि खुशी में आँसू भी टपकाने लगते हैं।

मछलियाँ पकड़ना और सफेद चिकनी मिट्टी और लाल गेरू से शरीर पर की जाने वाली क्लिष्ट चित्रकारी ओंग संस्कृति की सुप्रसिद्ध विशेषताएँ हैं। यह लाल रंग का घोल सूअर या कछुए की चर्बी से तैयार किया जाता है। लाल रंग का गेरू मृत्यु जैसे दुःख के अवसरों पर इस्तेमाल किया जाता है जबकि पानी में मिली उजली मिट्टी की चित्रकारी विवाह, शिकार में हुई सफलता या उत्सवों के अवसर का गहना है। ये डिजायन ज्यामितिय होते हैं और इसे शरीर पर उकेर कर बनाया जाता है। इसमें व्यक्ति के शरीर पर मिट्टी फैला दी जाती है और नाखून या टहनियों से उकेर कर आकृति बना दी जाती है। शरीर पर की जाने वाली चित्रकारी ओंग जाति की औरतों का खास काम है। इसके द्वारा वे अपने पति और घर के बाकी सदस्यों के प्रति अपना प्रेम और श्रद्धा प्रकट करती हैं। सफेद मिट्टी किटाणुओं को भगाने वाला भी है तथा यह सिरदर्द की दवा के रूप में भी काम करती है। हम सबने ओंग जाति के लोगों के *गेबोरल-बेयरा* नामक घरों की तस्वीरें देखी हैं जिसका अर्थ है—वन। मधुमक्खी के छत्ते जैसे इस घर की बनावट आरामदेह छाते की तरह होती है जो लकड़ी खजूर की पत्तियों और लाठी से बनाई जाती है। यह जमीन की ऊँची पट्टी पर एक कतार में बनाया जाता है। यह वर्षा से बचाव करने वाला तथा आरामदेह होता है जिसका इस्तेमाल शयनकक्ष के रूप में किया जाता है। 'कोरल' या अस्थायी झोंपड़ी सामान्य आवास है जिसकी छत लट्ठों और खजूर की पत्तियों का बना होता है। कुम्हारी—ओंग जाति के लोगों की दूसरी खासियत है। ओंग लोग तार लपेटने वाली शैली के बर्तन बनाते हैं—इसमें पहले मिट्टी को रस्सीनुमा बनाया जाता है फिर उसे गोल-गोल लपेट कर बर्तन बना दिया जाता है।

अंडमान और निकोबार के आदिवासियों में निकोबारी सबसे सफलतम आदिवासी हैं जिनकी संख्या 20,000 है। जहाँ अन्य जनजातियाँ बाहरी दुनिया के संपर्क में आकर

बीमारियों व अन्य समस्याओं से जूझ रही हैं वहीं निकोबारियों ने बाहरी दुनिया से तालमेल बना लिया है जिससे वे समृद्ध हो रहे हैं तथा विकास कर रहे हैं। आसपास रहने वाले अन्य समुदाय भी उनके साथ अच्छा व्यवहार करते हैं जबकि जारवा और ओंग जाति के लोगों को हमेशा हेय दृष्टि से देखा जाता है और उनकी खिल्ली उड़ाई जाती है। यह लिखते हुए मेरे दिमाग में एक खौफनाक बात याद आई है जिसे मैं आपके साथ साझा करना चाहता हूँ।

निकोबारी निग्रीटोस नहीं बल्कि भारतीय-मंगोल प्रजाति के हैं। ये गोरे होते हैं, इनके बाल सीधे तथा आँखें थोड़ी चिपटी होती हैं। किसी निकोबारी जनजाति के व्यक्ति को हम बड़ी आसानी से उत्तर-पूर्व भारत का, म्यानमार, मलाया या इंडोनेशिया का निवासी होने की गलती कर सकते हैं। हो सकता है, उनकी गोरी चमड़ी के कारण अपेक्षाकृत काले रंग वाले निग्रीटो प्रजाति की जनजातियों से बेहतर व्यवहार किया जाता हो। यह निश्चित ही एक ऐसा तथ्य है जिस पर विचार किया जा सकता है क्योंकि पूरे विश्व के लोगों में गोरी चमड़ी के प्रति एक अजीब किस्म का आकर्षण है और भारत भी उनमें से एक है।

निकोबारियों को दूसरा फायदा यह था कि वे पहले व्यापार से जुड़े थे। इसके कारण बाहरी दुनिया से उनका हमेशा से संपर्क रहा। जारवा और ओंग जातियों की तरह ये निर्जन और एकांत में रहने वाले नहीं थे जिनकी मानसिकता और शरीर आक्रामक व नई संस्कृतियों की घुसपैठ को समझ पाने में असफल रही थी। अन्य जनजातियों के विपरीत निकोबारी परंपरागत रूप से खेती करने वाले, चरवाहे तथा शिकारी थे। ये लोग निकोबार के बारह द्वीपों पर रहते हैं। इनमें से बहुतों ने शिक्षा हासिल कर ली है और रोजी-रोजगार की तलाश में देश-दुनिया में जा रहे हैं। ये लोग ईसाई धर्म को मानने वाले हैं तथा इनके नेता बिशप रिचर्डसन हैं। बिशप रिचर्डसन ने निकोबारी जनजाति के लोगों को शिक्षित, संगठित और राजनीतिक रूप से जागरूक करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। बिशप जॉन रिचर्डसन भारतीय संसद में अंडमान-निकोबार के पहले प्रतिनिधि थे।

पिछले सौ सालों में निकोबारियों की संस्कृति में काफी बदलाव आया है। उनके खान-पान, रिवाज, पहनावे, विश्वास तथा अन्य सांस्कृतिक रिवाजों में भारी बदलाव आया है। लेकिन यदि आप अलग-अलग द्वीपों का भ्रमण करें तो इन लोगों की जीवन शैली में काफी अंतर पाएँगे। इनके पास ढेरों भाषाएँ हैं। यदि निकोबारी जनजाति के व्यक्ति ने स्कूल में कार-निकोबारी भाषा नहीं पढ़ी है तो एक द्वीप का व्यक्ति दूसरे द्वीप वाले से बात भी नहीं कर सकता। जहाँ एक द्वीप पर निकोबारी जींस और टी-शर्ट पहन कर गिरजाघरों में भजन गाते मिलेंगे वहीं पचास किलोमीटर दूर के द्वीप पर निकोबारी आदिवासी पारंपरिक पोशाक पहनकर लकड़ी की मूर्ति के पास घुटने टेक कर बैठा हुआ मिलेगा जहाँ ओझा (झाड़-फूँक करने वाले) भूत-प्रेत अथवा बुरी आत्माओं को भगा रहे होंगे।

कम से कम मेरे विचार से शोमपेन जाति के आदिवासी अंडमान और निकोबार में रहने वाले लोगों में सबसे खुशनसीब हैं। वे निकोबार के महान द्वीपों पर रहते हैं जो खूबसूरत परिवार्षिक धाराएँ, नदियों, पहाड़ियों, घाटियों और वनों का द्वीप है। ये भी मंगोल प्रजाति के हैं हालाँकि ये निकोबारियों से अलग दिखते हैं तथा इनकी अपनी भाषा है जो औरों से अलग है। ये लोग स्वभाव से शर्मिले और संकोची होते हैं। इन्होंने जहाँ तक संभव हो सका बाहरी दुनिया से संपर्क का विरोध किया।

सुमात्रा के इंडोनेशियाई द्वीप से 145 किलोमीटर उत्तर स्थित इस महान निकोबार द्वीप पर विविध एवं उच्च स्तर की जैव-विविधता है। यह मेगापोड सहित विभिन्न प्रजातियों के जीवों का निवास स्थान है। शोमपेन आदिवासी डिंभकों, समुद्री कछुओं के अंडों और केवड़े जैसे मौसमी खाद्य पदार्थों की तलाश में जगह-जगह घूमते रहते हैं। शहद विटामिंस से भरपूर भोजन है। इसे निकालने के दौरान गुस्साई मधुमक्खियों से बचने के लिए ये पेड़ों के खाल का बना विशेष प्रकार का चूर्ण अपने ऊपर छिड़क लेते हैं। ये जांबाज मछुआरे होते हैं जो मछलियों को भेदने के लिए मछली मारने वाले भाले का इस्तेमाल लाजवाब निपुणता से करते हैं। ये मछली पकड़ने के लिए किसी भी प्रकार के जाल का उपयोग नहीं करते। निकोबारी आदिवासियों की ही तरह शोमपेन भी खेतिहर थे। इनके कई समूह सुअर पालन करते हैं तथा केवड़ों के छोटे-बगीचे लगाते हैं। बहुत दुःख की बात है कि समुद्र और वन से संबंधित इनकी जानकारी बहुत तेजी से समाप्त होती जा रही है। इनमें से अधिकतर अपनी पारंपरिक जीवनशैली और गुणों को बड़ी तेजी से भूलते जा रहे हैं क्योंकि कल्याणकारी योजनाओं पर इनकी निर्भरता बढ़ती जा रही है।

शोमपेन जाति के लोग आम तौर पर अपना घर नदियों या समुद्र के किनारे बनाते हैं। घर नीचे बाँस लगाकर, ऊपर उठाकर बनाया जाता है जिसमें सीढ़ियों के सहारे आ-जा सकते हैं। घर के नीचे की जगह बाड़े बना दिया जाता है जिसमें वे सूअर पालते हैं। इनकी पारंपरिक पोशाक पेड़ों की खाल को पानी में भीगोकर और पीट कर बनाया जाता था जो वे अभी हाल तक पहना करते थे। जब यह सुनम्य हो जाता है तो इसे खींचकर सुखाया जाता है और वस्त्र या फैशन के हिसाब से उसे आकार दे दिया

जाता है। शोमपेन लोगों के जीवन के विभिन्न पहलुओं में से एक सत्य यह भी है कि ये लकड़ियों को रगड़कर आग पैदा करते हैं। सूखी लकड़ी की छड़ी बनाई जाती है और इसी तरह की दूसरी छड़ी से उसे रगड़ते हैं। इस प्रक्रिया से जो धूल उत्पन्न होती हैं उसमें आग पैदा हो जाती है।

जैसा कि आप देख सकते हैं—भाषा, परिवार संरचना व संस्कृति—मसलन, नाचना-गाना या रहन-सहन के मामले में अंडमान और निकोबार द्वीप में रहने वाले ये छह आदिवासी जनजातियाँ एक-दूसरे से बिलकुल अलग हैं। जहाँ कुछ लोगों को आग जलाने का ज्ञान है, वहीं जो यह नहीं जानते हैं वे इसकी रक्षा हर कीमत पर करते हैं। और अपने साथ धूना मशाल और सुलगती हुई अंगीठी रखते हैं। उनके नाव भी एक-दूसरे से अलग तरह के होते हैं। जहाँ जारवा जनजाति वाले मामूली बेड़ों का इस्तेमाल करते हैं वहीं निकोबारियों की डोंगी उत्कीर्ण गलहियों के साथ चौड़ी होती हैं।

समुद्र तट पर रहने वाली ये जनजातियाँ समय का पता पानी के बहाव से लगाते हैं। जल का प्रवाह स्पष्ट रूप से इन लोगों के लिए घड़ी का काम करता है। धार्मिक विश्वासों और संस्कृतियों में कुछ मजेदार सामान्य संबंध हैं। उदाहरण के लिए पूर्वजों की पूजा और सूर्य, चंद्रमा व अन्य स्वर्ग में रहने वालों की पूजा में गहरा अंतरसंबंध प्रतीत होता है। हर आदिवासी समूह का अपना अलग धर्म है। इसलिए जब भी हम कहते हैं कि भारत में पाँच या छह धर्म हैं तो हम गलत होते हैं। हमारे पास उससे अधिक धर्म हैं जो भारत की सांस्कृतिक संपत्ती में और इजाफा करती है। अब अगली बार यदि आप से कोई पूछे कि भारत में कितने धर्म हैं तो सैकड़ों कहना न भूलिएगा।

समुद्री लुटेरे एवं मार्गदर्शक

अंडमान एवं निकोबार द्वीप समूह संसार के महत्त्वपूर्ण समुद्री मार्गों में से एक पर स्थित है। उन दिनों जब सामानों की ढुलाई का जरिया एक मात्र समुद्री जहाज हुआ करता था, ये द्वीप समूह बहुत ही महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाया करते थे। पश्चिमी देशों और भारत, बर्मा एवं सुदूर पूर्व के मध्य व्यापार के लिए चलने वाले समुद्री जहाजों के लिए ये द्वीप समूह बहुत ही महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाया करते थे। आधुनिक लिखित इतिहास में इस बात का प्रमाण है कि इन द्वीप समूहों के कुछ निश्चित जगहों पर जहाज ईंधन के लिए लगातार रुका करते थे। ये जहाज समुद्र के किनारे कई जगहों पर जैसे कि पोर्टब्लेयर आदि सुरक्षित किनारों पर ईंधन के लिए या मरम्मत के लिए अथवा विनाशकारी समुद्री तूफानों से बचाव के लिए या फिर लंबी समुद्री यात्रा के दौरान होने वाली बीमारी से राहत एवं आराम के लिए लगातार रुका करते थे। घूमने के दौरान इन समुद्री यात्रियों एवं व्यापारियों ने इसके सुंदर किनारों एवं जंगलों से सभ्य समाज को अवगत कराया। कई सप्ताह तक समुद्री यात्रा में बिताने के बाद अंडमान एवं निकोबार नाविकों के लिए पहला पड़ाव हुआ करता था। समुद्री यात्रियों के लिए यह निश्चय ही आकर्षण का एक बिंदु हुआ करता होगा कि वे लोग एक बार फिर से समुद्र के किनारे उतरेंगे और धरती पर पैर रखकर खड़े होंगे व चहलकदमी का मौका पाएँगे। क्या आपने कभी लंबी समुद्री यात्रा की है? पहले तीन-चार दिनों की यात्रा के बाद ही कहीं जाकर आपको कोई मनोहर समुद्री किनारा देखने को मिलेगा और वह भी खास कर तब जब आप अपने आप को बीमार महसूस करने लगेंगे।

समुद्री जहाज दो तरह के होते हैं, कार्गो यानि मालवाहक जहाज और यात्री जहाज। अनेकों मालवाहक जहाज उन दिनों अंग्रेजों के अधीन हुआ करते थे जिसके जरिये इंग्लैंड से सामानों को भारत के बाजार में बेचने के लिए लाया जाता था। ये अंग्रेज इसके बदले भारत से कपास, मसाले, सोना, चाँदी, कीमती पत्थर, इमारती लकड़ी और इसके साथ ही हमारे गुप्त राष्ट्रीय खजाने जैसे कोहिनूर हीरे आदि ले जाया करते थे। वापसी में वे सूती धागों के गट्ठर भी ले जाते थे जिससे तैयार कपड़े फिर से भारत के बाजारों में बेचने का काम किया करते थे। यह कोई न्याय संगत व्यापार नहीं था पर उन दिनों साम्राज्यवादी ताकतों द्वारा इस तरह का अन्यायपूर्ण व्यापार करना आम बात हुआ करता था। वे सबसे पहले अपने बारे में सोचते थे उसके बाद ही कहीं जाकर उन लोगों के बारे में सोचते थे जिन पर वे भाषण किया करते थे। बाद में जब अंडमान में ब्रिटिश कोलोनी बस गई तो उसने सबसे पहले यहाँ से भारी मात्रा में पडौक और अन्य महत्त्वपूर्ण इमारती लकड़ियों को इंग्लैंड भेजा जिसका उपयोग बर्मिंघम पैलेस में मेज, कुर्सी एवं साज-सज्जा के सामानों के बनाने में हुआ।

हालाँकि, ये सारी बातें बहुत बाद में हुई। आइए, अब हम आपको अंडमान और निकोबार के प्रारंभिक इतिहास के बारे में बताते हैं। वास्तव में हम इसे कोरा इतिहास नहीं कह सकते, क्योंकि काफी हद तक इसमें कल्पनाओं, अतिश्योक्तियों, झूठ और सपनों के साथ ही मिथकों का समावेश है। यहाँ के अनेकों प्रारंभिक विवरणों से पता चलता है कि यहाँ के स्थानीय निवासियों का कार्य व्यवहार कल्पनाओं से भरा है जिसे नरभक्षी और अधिमानव के नाम से बखान किया गया है। निश्चय ही यह एक जहाज के सवारियों के लिए इस द्वीप पर रुकने के बाद यह एक डरावना और आश्चर्यजनक अनुभव रहा होगा जब उन पर घने जंगलों से निकलकर ढाल, तलवार, बर्छी और भालों से लैस लोगों ने आक्रमण किया होगा जबकि जिस द्वीप के बारे में वे कुछ नहीं जानते थे सिवा इसके कि यह पूरी तरह से सुरक्षित है और यहाँ कोई मानव जाती नहीं रहती। यह निश्चय ही एक भयभीत कर देने वाला अनुभव रहा होगा जो यात्रियों को कल्पना की दुनिया से बाहर निकलकर वास्तविकता के धरातल पर लाने के लिए काफी था।

आज इस मूक वक्तव्य को पढ़कर यहाँ की वास्तविकता से परिचित हो जाएँगे जिसे एक अरब यात्री ने लिखा था और उसका अनुवाद युसेबियस रेनौदत ने किया था—''इस समुद्री द्वीप के लोग मनुष्य का कच्चा ताजा मांस खाते हैं, उनका रंग काला है, उनके बाल घुंघराले हैं उनके चेहरे और आँखें डरावने होते हैं।'' और दूसरी वास्तविकता से पूर्ण विवरण बताता है कि उनका सिर उनके दोनों कंधों के नीचे उगे होते हैं।

तेरहवीं शताब्दी के जाने माने पर्यटक मार्कोपोलो ने अंडमान समूह के बारे में सन् 1290 में लिखा है—'अंडमान एक बहुत बड़ा द्वीप है। यहाँ के लोग बिना राजा के हैं और वे नैतिक एवं विचारवान हैं पर वे जंगली जानवरों से बेहतर जीवन नहीं जीते। और मैं आपको विश्वास दिलाता हूँ कि इस अंडमान द्वीप के मानवों का माथा कुत्ते के जैसा है और इसी तरह के उनके आँख और दाँत भी हैं...और इस सबसे भी खास ये कि यहाँ के लोग वही खाते हैं जो वे पकड़ सकते हैं यानि शिकार कर सकते हैं। और यदि वे ऐसा नहीं कर सकते तो यह उनकी अपनी हार है।

पचास से साठ साल बाद पर्यटक यह स्वीकारने के लिए तैयार हुए कि इस द्वीप के लोग भी सामान्य मानवों की तरह हैं न कि जानवरों की तरह या फिर राक्षसों की तरह, लेकिन इनका व्यवहार, इनकी परंपरा और संस्कृति व इनके जीवन जीने का ढंग वाकई बहुत घटिया है। इस क्षेत्र के जंगली मानवों के जिंदगी की खासियतों का बखान 1859 ई. के एक ब्रिटिश रिपोर्ट में किया गया है जिसके अनुसार—''दुनिया के किसी भी घटिया से घटिया संस्कृति के मानवों का जीवन स्तर इतना गिरा नहीं होगा जितना कि क्रूर और बर्बर जीवन स्तर अंडमान द्वीप के मानवों का है।'' इसके बाद डेनमार्क के साम्राज्यवादियों की नज़र संसार के इस भाग पर परा। 1756 में डेनिश सरकार ने निकोबार में स्थाई रूप से बसाने की प्रक्रिया शुरू किया और इसके 12 साल बाद ही इसे मलेरिया की वजह से होने वाली बीमारी और मौत के भय से छोड़ दिया। पर निकोबार को उन्होंने बहुत ही महत्त्वपूर्ण समझा और उसपर भाषण करना बेहतर समझा और इस वजह से उन्होंने 1833 ई. में डेनिश गवर्नर की नियुक्ति भी कर डाली जिसने अपना कार्य भार भी संभाला।

उन दिनों यानि लगभग 200 साल पहले इंग्लैंड, फ्रांस और डेनमार्क जैसे देश महत्त्वपूर्ण साम्राज्यवादी शक्तियाँ थीं। इनके पास शक्तिशाली समुद्री जहाज हुआ करते थे और इनके प्रतिनिधिगण अपने देश के झंडे को उन जगहों पर गाड़ने का काम करते थे जो उनके व्यापारिक हित के लिए बहुत ही महत्त्वपूर्ण एवं समुद्री लुटेरों से बचाने में मददगार जगह होते थे और इन जगहों पर उनसे पहले कोई दूसरा उसका दावा करने वाला नहीं होते थे। यह वही समय था जब यात्रा करना खतरनाक एवं अनिश्चितता से भरा होता था। इसके साथ ही उन दिनों कोलरा, मलेरिया और अन्य स्थानीय बीमारियों का कोई इलाज नहीं हुआ करता था। जहाज पुराने ढंग का हुआ करता था और वह कहीं भी रुक जाता था। अंडमानी जैसी विरोधी जनजाति कभी भी आपके ऊपर तीरों का बौछार कर सकती थी। यदि आप समझदार होते तो आप अपने घरों में ही रहना पसंद करते।

लेकिन दूसरी ओर, यह बहादुर और खोजी प्रवृत्ति के लोगों के लिए बहुत ही उत्तेजित कर देने वाला समय हुआ करता था। अब तक न तो पूरे विश्व का खोज हो सका था और न ही उसके बारे में सभी को पूरा पता होता था। और जब आप अपने घरों को

लौटते व इस बात की घोषणा करते कि आपने एक नए देश या द्वीप या फिर महादेश की खोज की है तो यह एक बड़ा ही रोचक क्षण हुआ करता था। यह इस बात का संकेतक होता था कि आप में कठिनाइयों से लड़ने की बहुत अधिक क्षमता है और आपके पास डरावना और दिल दहला देने वाला अनुभव भी है। आप चाहें तो अपने अनुसार एक अनोखी कहानी भी गढ़ सकते थे क्योंकि उन दिनों आपकी उपलब्धि को किसी भी तरीके से परखने का कोई साहस नहीं कर सकता था क्योंकि उन दिनों न तो कोई टेलीफोन हुआ करता था न रेडियो, न टेलीविजन या फिर ई-मेल अथवा अंतरराष्ट्रीय स्तर का कोई अख़बार या फिर पत्रिका ही। उन दिनों के आदमी इतने सीधे होते थे कि उन्हें आसानी से धोखा दिया जा सकता था क्योंकि वे किसी भी बात पर तुरंत विश्वास कर लेते थे। कुछ लोग तो ये समझते थे कि यह धरती एकदम से चिपटी है और आप इसके एक छोड़ से दूसरे छोड़ को आसानी से पा सकते हैं यदि आप काफी दूर तक चलने को तैयार होते हैं। या फिर एक ग्रहण का मतलब होता था कि सूरज चंद्रमा को ही निगल लेता है। उन दिनों के कुछ प्रारंभिक पर्यटक, जिन्होंने अंडमान-निकोबार द्वीप समूह के बारे में लिखा है, वे हैं—इत्सिंग (672 ई.), मार्कोपोलो (1286 ई.), फ्रेयर ओडोरिक (1322 ई.) एवं निकोला कोंटी (1430 ई.)। इनमें से अधिकांश पर्यटक महज अपने मनोरंजन के लिए घूमे थे। लेकिन इसके साथ ही कुछ व्यावसायिक पर्यटक भी थे। ये पर्यटक बेरोक-टोक आवागमन करते थे और इनमें से अधिकांश मलय प्रदेश, बर्मा और चीन के हुआ करते थे।

अंडमान में पाए जाने वाले महत्त्वपूर्ण वस्तुओं में से एक खाने योग्य चिड़ियाओं का घोंसला, जो कि चीन समेत अन्य सुदूर पूर्वोत्तर के देशों में लोकप्रिय था। इन चिड़ियाओं का घोंसला झोले के आकार का अथवा मेवे के आकार का बना होता है। यह घोंसला काफी तेज रफ्तार से उड़ने वाली एक छोटी चिड़िया बनाती है जिसे स्विफ्टलेट अथवा अबाबील पक्षी कहा जाता है। इसके लार में खास किस्म की निर्माण सामग्री होती है जो ईंट की तरह कठोर पदार्थ है जिसकी मदद से ये चिड़ियाएँ अपने छोटे-छोटे घोंसले को ठोस और स्थाई रूप देने का काम करती हैं। घोंसले के व्यापारियों ने जल्द ही इन

अबाबील पक्षियों के ठिकानों को जान लिया जो सामान्यतः समुद्र के किनारे के चट्टानों की गुफाओं में बनाते थे। वे यह भी जानते थे कि ये पक्षीगण साल में दो या तीन घोंसले बनाते हैं जिसमें से पहले घोंसले का स्तर अन्य के मुकाबले काफी बेहतर होता है। पक्षी विज्ञानी (वे लोग जो पक्षियों के बारे में अध्ययन करते हैं) का मानना है कि कोई भी पक्षी अपना दूसरा या तीसरा घोंसला तभी बनाते हैं जब उसके पहले वाले घोंसले को कोई हटा लेता है, और कई बार उस जगह पर खून के धब्बे को देखते हैं। अंडमान में ब्रिटिश शासन के दौरान अबाबील के घोंसले व्यापारियों को कारोबार करने के लिए लीज के रूप में दिया जाता था ताकि उनमें आपसी टकराव को रोका जा सके, पर कभी-कभी ऐसा भी समय आया जब दो या दो से अधिक व्यापारियों के बीच घोंसला के लिए युद्ध हुआ जब एक से अधिक व्यापारी एक ही क्षेत्र में व्यापार के लिए गए।

यहाँ का दूसरा लोकप्रिय व्यापारिक वस्तु *बेचे दे मेर* अथवा समुद्री ककड़ी था। छिछले समुद्र की तलहटी पर लेटा यह अनोखा जानवर ऐसा प्रतीत होता है मानो वह रेत से भरा बिना धोया कोई लंबा जुराब हो। सूरज की धूप में सूर्ख हुआ यह जीव सुदूर पूर्व के लोगों का पसंदीदा भोजन है। व्यापारी लोग इस समुद्री ककड़ी से मोटी रकम कमाते थे।

इस तरह, अन्य खोज करने वालों एवं साहसियों के लिए यह समुद्री रास्ता पर यहाँ तक कि व्यापारियों एवं पर्यटकों से भी अधिक महत्त्वपूर्ण था। वे समुद्री लुटेरे थे जिनकी दिनचर्या अत्यंत व्यस्त हुआ करती थी क्योंकि उन्हें समुद्री जहाजों को लूटना जो होता था। मलय प्रदेश के लुटेरों के बारे में पुराने जमाने में समुद्री यात्रा को लेकर अनेकों कहानियाँ चर्चित हैं। वे लुटेरे चाहे यात्री जहाज हो या फिर व्यापारी, जो जहाज उनके रास्ते से होकर गुजरते थे, उन पर हमला बोलते थे और उन्हें अवश्य लूटते थे। इस रास्ते पर अनेकों वीरान और मानव रहित टापू हुआ करता था जहाँ ये लुटेरे छिपकर कीमती सामानों से लदे जहाजों के आने की प्रतीक्षा करते थे। इनके आते ही ये लुटेरे बंदूक के दम पर सोने, चाँदी, कीमती गहने, जेवरात और अन्य बेशकीमती सामानों को लूट लेते थे।

दास व्यापारी अथवा हब्शी लोग समुद्री लुटेरा हुआ करते थे, अधिकांशतः मलय प्रदेश के लोग जो लोगों को चुराने या पकड़ने का काम किया करते थे ताकि उन्हें दास व्यापार के लिए बेचा जा सके। पुराने अंग्रेजी लेखक उन लोगों को समुद्री जिप्सी के रूप में संबोधित करते थे और मलयों को ओरंग लाउट। दास प्रथा उन दिनों सर्वमान्य था और जीवन का एक कटु सत्य था। पूरी दुनिया में काले लोगों का उन दिनों इस काम के लिए अपहरण किया जाता था, उन्हें बंधक बनाया जाता था, उन्हें हथकड़ियों से जकड़ा जाता था व लोहे की जंजीरों में जकड़कर दूर देशों में समुद्र के रास्ते भेजा जाता था। इनमें से कुछ कृषक मजदूर बनाए जाते थे और बाकी को विभिन्न कामों में लगाया जाता था। इसमें कोई शक नहीं कि संयुक्त राज्य अमेरिका सबसे अधिक अफ्रिकी दासों के लिए मशहूर था। समृद्धि की पहचान के तौर पर भी उपहार के रूप में दासों को दिया जाता था और अनेकों अंडमानी लोगों को दास के रूप में कंबोडिया, चीन, बर्मा, इंडोनेशिया और अन्य देशों के राजाओं को भी भेजा गया था। इस बात का प्रमाण है कि थाईलैंड के राजदरबार में 1860 ई. में ये दास लोग थे। कुछ ने तो इंग्लैंड और यूरोप के अन्य देशों में अपना दास जीवन बिताया। दास के रूप में बच्चों को काफी महत्त्वपूर्ण माना जाता था क्योंकि ये बच्चे कहीं भेजते समय जहाज पर कम स्थान लेते थे और उन्हें आसानी से एक जगह से दूसरी जगह ले जाया जा सकता था। इसके साथ

ही ये बच्चे बड़ों के मुकाबले न के बराबर घर-परिवार की कमियों को महसूस करते थे और न ही उस तरह उदास रहा करते थे। उन्हें आसानी से प्रशिक्षित किया जा सकता था क्योंकि बच्चे बड़ों के मुकाबले तेजी से चीजों को सीखते हैं।

समुद्र के उस तट या समुद्र तटीय जंगल के उस दृश्य की कल्पना कीजिए जब शांत एवं सौम्य अंडमानी, जारवा या फिर ओंग जनजाति के दासों से भरा कोई जहाज किसी द्वीप के मछली पकड़ने वाले अथवा शिकारी स्थल से अपना पड़ाव उठाता होगा। बंदूक की नोक पर अथवा झूठी दोस्ती के नाम पर हब्सियों का एक समूह समुद्र तट पर जाता था और चार या पाँच स्थानीय मूल निवासियों को पकड़ लाता था। गिरफ्त में लाए गए लोगों के पैरों में बेड़ी डाल दी जाती थी और उन्हें जहाज के किसी खास एवं सुरक्षित भाग में छिपा दिया जाता था। आप उनकी भावना का खुद कल्पना कीजिए जिनका यह अपने प्रिय, घर, परिवार, समाज और समूह से अंतिम मुलाकात ही साबित हुआ। इनके गुस्से की कल्पना कीजिए जो समुद्र के किनारे यह देखते रह गए जिनके किसी प्रिय को लेकर जहाज सुदूर समुद्र में निकल गया, यह स्थिति मौत से भी बदतर होती है। हमें इस बात से अचंभित नहीं होना चाहिए कि उन दिनों अंडमान और निकोबार द्वीप समूह में रहने वाली जनजातियों में से निग्रीटो समुदाय के लोग हम जैसे संभ्रांत लोगों के साथ शत्रुतापूर्ण व्यवहार करते थे और उनसे दूर रहना पसंद करते थे।

यह बड़ा ही रोचक पहलु है कि 1789 ई. के आसपास लेफ्टिनेंट ब्लेयर ने अनुभव किया कि अंडमानी और जारवा जनजाति के लोग बंदूक के बारे में जानते थे और वे इससे डरते भी थे। उन दिनों यह पूरी तरह से एक स्वीकार कर लेने वाली बात है कि स्थानीय नागरिकों को परेशान करना, उनका अपहरण करना, उनके साथ छेड़छाड़ करना एवं उन्हें गुलाम बनाना साम्राज्यवादियों का पहला काम था।

हम यहाँ स्पष्ट शब्दों में बंधक शब्द का प्रयोग निग्रीटो जनजाति के लिए कर रहे हैं। लेकिन यह बहुत जरूरी है कि हम इस बंधक बनाने की प्रक्रिया को देखें और बेहतर ढंग से समझें। यह निश्चय ही एक डरावना पहलु है और यह भय बीते दिनों के बुरे अनुभव के रास्ते से आता है। उनका यह अनुभव रहा है कि गुलाम बनाने वालों ने उनके लिए

मौत या तो बीमारी के रूप में तड़पा-तड़पाकर लाया है या फिर बंदूक की गोली दागकर। जारवा और ओंग जनजाति के लोगों ने भय के साथ यह निश्चित रूप से अनुभव किया कि अंडमानियों की संख्या में अचानक और नाटकीय ढंग से कमी तब आई जब चथम और रोस द्वीप समूह पर अंग्रेज स्थाई तौर पर बसने के बाद उनके संपर्क में आए और उनकी भाषण वादी नीतियों का शिकार हुए। शायद इसके बाद उन्होंने यह निर्णय लिया कि वे फिर से ऐसी गलती नहीं करेंगे। और यह उनका बहुत ही सराहनीय निर्णय था।

अंडमान एवं निकोबार के लोगों के खट्टे-मीठे अनुभव की चटकदार कहानियों को जितनी भी बार कहा जाता है तो मानो ऐसा लगता है कि भारी मात्रा में कहीं सोने और चाँदी रखे हुए हैं जिसे अभी खोजना बाकी है। उनमें से एक जो सबसे खास है वह ये कि एक बार एक जहाज भयंकर समुद्री तूफान की चपेट में आकर निकोबार द्वीप के तट पर जा टकराया। वहाँ के निवासियों ने उस जहाज से यात्रा करने वाले लोगों को पीने का पानी दिया और जहाज के बिखरे हुए हिस्से को खोजकर लाए ताकि उसे लंगर डालने में कोई परेशानी न हो। इसके साथ ही लोगों की जरूरतों का भी खयाल रखा। लंगर का वह हिस्सा जो स्थानीय निवासियों ने लाकर दिया था, सोने का बन गया। ऐसी भी कहानियाँ सुनने को मिलती है कि यहाँ के पानी से भी सोना बनता है, लेकिन यह कैसे संभव है, इसे एक चमत्कार से अधिक कुछ नहीं कहा जा सकता। इस तरह ऐसे भी नासमझ लोग होते हैं जो आसानी से किसी मनगढ़ंत कहानियों पर विश्वास कर लेते हैं, ऐसा भी हुआ है कि कुछ ने तो सोने की खोज में इस द्वीप पर अपना जान तक गंवा दी। उनमें से एक है डॉ. हेल्फेर जिन्होंने 1839 ई. में अपने दुःखद यात्रा में निकोबार के सोने से अपनी जेब भरने के मूर्खतापूर्ण कार्य में अपनी जान गंवाया था। इसके अलावे एक अन्य सिरफिरा सैन्य मार्गदर्शक मि. क्विगले थे जिन्हें न केवल सोने की लालच के लिए बल्कि नारियल के प्रति प्रेम और खंडित जहाज की सहायता से विध्वंसकारी तूफान से लड़ने के लिए जाना जाता है। उन्होंने 1850 में अपनी कल्पना में बड़े सुंदर शब्दों में लिखा है कि उसने इस द्वीप पर बाघ, तेंदुआ एवं अन्य अनेकों जंगली जानवरों का जमकर शिकार किया है।

यूनियन जैक का लहराया जाना

अंडमान एवं निकोबार द्वीप समूह के इतिहास की ऐतिहासिक घटनाओं में से एक है वर्ष 1789। इस वर्ष ब्रिटिश भारत की तत्कालीन राजधानी कलकत्ता (वर्तमान में कोलकाता) से अंडमान द्वीप समूह के लिए पाँच जहाजों का एक बेड़ा रवाना हुआ। इन जहाजों का नाम था क्रमशः–*अटलांटा, परसेवरांस, एरियल, रंगत* एवं *वाइपर*। इनमें से कुछ नाम इस द्वीप के बच्चों के लिए जाना माना था क्योंकि कई खाड़ियों, द्वीपों, समुद्री कटाव एवं अन्य भूसंरचनाओं का नाम इनसे पहले ही खोजी जहाजों ने दे रखा था।

यह बेड़ा भारतीय नौसेना के लेफ्टिनेंट आर्किबल्ड ब्लेयर के निर्देशन में थी जो खुद *अटलांटा* में सवार थे। वे ब्रिटिश सरकार के प्रतिनिधि के तौर पर अंडमान एवं निकोबार द्वीप समूह की भूमि पर यूनियन जैक लहराने जा रहे थे। लेफ्टिनेंट ब्लेयर ने अंडमान द्वीप का सर्वे करने का आदेश दिया जिसके तहत उन्होंने सबसे बेहतर एक जगह को चुना जहाँ पर स्थाईकरण की प्रक्रिया को शुरू किया जा सके। समुद्री तूफान या फिर युद्ध के समय इस स्थान का उपयोग समुद्री जहाजों के लंगर डालने अथवा छिपाने का काम आ सके या फिर एक बेहतर ठिकाना साबित हो सके इस उद्देश्य से तैयार किया जा रहा था। स्थानीय नागरिक जिन्हें विरोधी समझा जाता था अथवा जिन्हें असहयोगी माना जाता था निश्चय ही उन्हें अपने अनुरूप ढाला जा सके एवं सभ्य बनाया जा सके यह एक दूसरा पहलू था। इसके साथ ही इसका तीसरा कार्यक्रम था बर्मा के अपराधियों को एक पैनल बनाकर स्थाईकरण किया जाय।

लेफ्टिनेंट ब्लेयर संसार के उस अनजान हिस्से को विश्व पटल पर लाने की कोशिश कर रहे थे और इस काम में उनका साथ दे रहे थे बंगाल इंजीनियर के लेफ्टिनेंट कोलेब्रूक। ब्लेयर का काम कोई आसान काम नहीं था। समुद्री जहाजों से यात्रा कर यहाँ तक कि भयंकर तूफानी मौसम से लड़ते हुए उन्होंने अंडमान के टेढ़े-मेढ़े समुद्री किनारों को मापने का काम पूरा किया। उनके इंजन में खराबी थी और अंडमानियों के आक्रमण की भी जबरदस्त संभावना थी। लेकिन लेफ्टिनेंट ब्लेयर एक बेहतरीन अनुभवी सर्वे करने वाले एवं बहादुर इंसान थे (उनके कई सर्वे का आज भी उपयोग किया जाता है)। उन्होंने अपने विवेक कौशल का उपयोग दक्षिणी अंडमान के पूर्वी तट पर नए बंदोबस्त के लिए स्थान चुनने में किया। इसका नाम समुद्री कमांडर सर विलियम कर्नवालिस (भारत के तत्कालीन गवर्नर जेनरल लॉर्ड कर्नवालिस के भाई) के सम्मान में पोर्ट कर्निवाल दिया गया।

बहुत खूब, लफ्टिनेंट ब्लेयर का वह अंतिम काम नहीं था। सरकार ने उन्हें वहीं अंडमान में रूकने का आदेश दिया और स्थाईकरण के काम को आगे बढ़ाने के लिए कहा। अगस्त 1790 तक उन्होंने पोर्ट कर्नवालिस के बहुत बड़े भूभाग को साफ कराने का काम पूरा कर लिया और उस खाली कराए गए जमीन पर फलों के पेड़, सब्जियों के पौधे व घास लगवा डाला। इससे संबंधित प्रावधान उन्हें उनके अग्रणी दल ने कलकत्ता और पेनांग से भेजा था। 119 मजदूरों के लिए घर, एक स्टोर रूम और एक अस्पताल भी इसके साथ ही बनाए गए। लेफ्टिनेंट ब्लेयर को इस बात की पूरी जानकारी थी कि किस तरह से अंडमान के संसाधनों का बेहतर इस्तेमाल किया जा सके और इसी क्रम में उन्होंने यहाँ की लकड़ियों का नमूना कलकत्ता भेजते हुए यह सलाह दी कि पदोक से बेहतर रंग बनाया जा सकता है। यह बात बहुत कम ही लोग जानते थे कि पदोक एक महंगी एवं सख्त लकड़ी है जो एक दिन अंडमान की अर्थव्यवस्था का मुख्य आधार बन जाएगा। इसके बाद पदोक को समुद्री जहाज के माध्यम से मूल स्थान यानि इंग्लैंड बिजली के खंभे बनाने, रेलवे की पटरी को बिछाते वक्त मजबूत आधार देने के लिए एवं घर के छतों की बीम बनाने के लिए भेजा गया। इसके साथ ही हजारों टन अंडमान की

लकड़ी को इंग्लैंड वासी द्वारा महत्त्वपूर्ण व्यक्तियों के घरों, कोठियों एवं कार्यालयों को सजाने के लिए ले जाया गया।

इस खोज एवं स्थाईकरण के आधिकारिक रिपोर्ट के अनुसार यह पाया गया कि जारवा जनजाति कुछ हद तक बाहरी लोगों का मित्र रहा है। यह अंडमान का 'आका बी सेप्ट' ही था जिसने लेफ्टिनेंट ब्लेयर एवं उसके सहयोगियों को अधिकारियों एवं कैदियों पर आक्रमण कर कुछ रात जागकर बिताने के लिए मजबूर कर दिया।

स्थाईकरण का काम आगे बढ़ रहा था और लेफ्टिनेंट ब्लेयर ने अनुशंसा की कि इस द्वीप का एक छोटा धब्बा रोस जो कि पोर्ट कर्निवाल के क्षेत्र में आता है, को जैसे भी हो खोल दिया जाय। इसके बाद 1792 में अचानक रहस्यात्मक ढंग से सरकार ने निर्णय लिया कि पोर्ट कर्निवाल को छोड़ दिया जाय और सभी लोग उत्तरी अंडमान के बंदरगाह एरियल की खाड़ी की ओर चले जाएँ। यह समझना बड़ा कठिन काम है कि सरकार ने ऐसा निर्णय क्यों लिया पर ऐसा होता आया है कि सरकार अनेकों बार ऐसे निर्णय लेती है जिसे हम नहीं समझ पाते। संभवतः यह अनुभव किया गया होगा कि उत्तरी बंदरगाह का मौसम एवं क्षेत्रफल पोर्ट कर्निवाल के मुकाबले बेहतर एवं विस्तृत है। लेकिन संभवतः यह समुद्री जलवायु के हिसाब से यह सबसे अनुकूल जगह थी जहाँ समुद्री गतिविधि अथवा युद्ध के समय में आसानी से पहुँचा जा सकता था। हो सकता है कि उत्तरी अंडमान के लोग मित्रवत व्यवहार के थे।

कारण जो भी रहा हो, उत्तर में बसने का आदेश 1792 ई. में आया। इस समय समुद्री शस्त्रागार बनाने की तैयारी चल रही थी कि अचानक लेफ्टिनेंट ब्लेयर को आदेश मिला कि वे काम शुरू करवाए और कैप्टन एलेग्जेंडर किड जब आ जाए तो उन्हें कार्यभार सौंप दे। वे यहाँ के जंगल, पेड़-पौधों से लेकर इमारत बनाने तक की बातों से परिचित थे, ये सारी बातें उनके दैनिक जीवन का मानो एक भाग ही था। व्यक्ति एवं शर्तों के हिसाब से स्थानों का नाम भी बदला जा रहा था। एरियल की खाड़ी के साथ बनाई जा रही नई कालोनी का नाम भी पोर्ट कर्निवाल ही रखा गया। दक्षिण की सबसे पहली कालोनी को वर्तमान में ओल्ड हारबर के नाम से जाना जाता है।

जून, यूनियन, कर्निवाल व *सीहोर्स* जैसे रोचक नामों के जहाजी बेड़े के साथ फिर से लेफ्टिनेंट ब्लेयर ने 4 दिसंबर 1792 को नई जिम्मेदारी के लिए रवाना हुए। उन्हें अगले छह महीने की समय-सीमा में 360 उपनिवेशी आवास बनवाने थे। लेकिन यह किसी भी तरह से आसान यात्रा नहीं रही क्योंकि समुद्री तूफान ने अपना विनाशकारी रूप ले लिया और *जून* नाम के जहाज के बारे में फिर दोबारा नहीं सुनने को मिला। इसने उन दिनों की बुरी यादों का गहरा छाप छोड़ दिया जब सभी को समुद्र की तलहटी में किसी अज्ञात स्थान पर लंगर डालकर रुकने को मजबूर कर दिया। इनके साथ नए टाउनशिप के लिए 90 विश्राम गृह के सामान, उपकरण आदि थे।

लेफ्टिनेंट ब्लेयर अपने कामों पर लग गए और सारी चीजें एकदम सही ढंग से चली जिसके चलते जल्द ही वे अग्रणी सैन्य चौकी के काम को आगे बढ़ाने की स्थिति में आ गए। करीब 200 बंदियों को निरीक्षकों (गार्ड) की निगरानी में अलग-अलग इमारतों में भेज दिया गया। समय की घड़ी लगातार चल रही थी, इसके साथ ही अंडमान में यूरोपियन बंदी भी थे। पाँच गोरे कैदियों को भी इस खेप के साथ पोर्ट कर्निवाल भेजा गया लेकिन बाद में सुविधा के अभाव में इन्हें स्वदेश को भेज दिया गया। जैसा कि हम जानते हैं, यूरोपियन कैदियों के लिए सभी प्रकार की सुविधाओं का होना जरूरी था जबकि भारतीय कैदियों को जैसे-तैसे रखा जाना एक सामान्य बात थी। फलदार वृक्षों को सुमात्रा से मंगाया जा रहा था तथा कछुआ एवं अन्य जीव-जंतु के रूप में मांस उपलब्ध था। नारियल के पेड़ भी लगाए गए और अन्न

भंडार भी तैयार किया गया। मेजर माइकेल सेम जिन्होंने 1794 ई. में पोर्ट कर्निवाल का दौरा किया था, उन्होंने *एम्बेसी टू अवा* में लिखा है ''यहाँ मात्र बहुत कम मात्रा में भारतीय शाक-सब्जियों के फसल हैं।'' यद्यपि उनके अनुसार यहाँ का प्राकृतिक सौंदर्य एकदम से अलग, मनोरंजक और दिल को छू लेने वाली थी। इस समय तक लेफ्टिनेंट ब्लेयर ने पोर्ट कर्निवाल को छोड़ दिया था और कैप्टन एलेग्जेंडर किड ने कार्यभार संभाल लिया था। मेजर सेम ने लिखा है कि कैप्टन किड ने 'उनकी सेवा के लिए' एक अंडमानी लड़के को लगा दिया था। इस समय तक अंग्रेज इन आदिवासियों से बेगार मजदूर के तौर पर काम लेना मुफ्त शुरू कर दिया था और उन्हें दास बनाने एवं सताने लग गए थे।

छह महीने बाद जून 1793 में यह ख़बर आई कि ब्रिटेन और फ्रांस के बीच युद्ध शुरू हो चुका है। ऐसे में इस बात की जबरदस्त संभावना थी कि भौगोलिक रूप से दूर-दराज के ब्रिटिश निरीक्षण चौकी पर फ्रांस की जल सेना द्वारा आक्रमण किया जा सकता है। इस उपनिवेश पर भी जबरदस्त निगरानी की जाने लगी। ऐसे में बंगाल से भारी संख्या में मजदूर लाए गए ताकि यहाँ की सबसे ऊँची जगह पर कम से कम समय में एक किला, एक आयुधशाला (हथियारों का भंडार) और औरतों एवं बच्चों को छुपाने के लिए एक गुप्त गृह बनाया जा सके।

हालाँकि युद्ध तो पोर्ट कर्निवाल तक नहीं पहुँचा पर लेकिन मलेरिया ने अवश्य ही यहाँ अपना पाँव फैला लिया और पहले ही साल में 50 से अधिक लोगों को मौत के नींद सुला दिया। मलेरिया उन दिनों मौत की बीमारी समझी जाती थी क्योंकि तब इसका न तो कोई इलाज ही होता था और न उसके परीक्षण का ही खोज हो सका था। स्थानीय आदिवासी निश्चय ही सुरक्षा एवं इलाज, दोनों ही नजरिये से समृद्ध थे क्योंकि वे लोग स्वस्थ एवं तंदुरुस्त थे जबकि वे लोग मच्छरों के खान में रहते थे। जैसा कि आप जानते हैं कि आज जो भी दवाइयाँ प्रयोग में हैं उनमें से अधिकांश हमारे देश के जंगली जनजातियों जो कि शिकार कर अपना जीवन-यापन किया करते थे के पारंपरिक ज्ञान के आधार पर विकसित किए गए हैं।

जिस तेज गति से निर्माण कार्य शुरू हुआ था वह 1796 ई. तक समाप्त हो चुका था। खतरों के बीच रह रहे उपनिवेशवादियों को एक बार फिर समुद्री यात्रा करनी पड़ी। बाकी बचे 270 कैदियों को मलेशिया के पेनांग भेजा गया और 550 स्वतंत्र पुरुषों, महिलाओं एवं बच्चों को (जिसमें यूरोपीय जासूस एवं आयुधशाला के निरीक्षक शामिल थे) को स्वदेश भेज दिया गया। यह संख्या हमें इस बात का अंदाजा देता है कि इस पूरे तंत्र में निश्चित तौर पर कितने लोग शामिल थे। शुरुआत से लेकर मध्य तक जबकि इन उपनिवेशों पर कोई नहीं था, इतने सारे लोगों के लिए भोजन की व्यवस्था करना, इनके लिए घर बनाना व इनकी देख-रेख करना कोई मामूली उपलब्धि नहीं थी। इसी बीच यह आदेश आया कि वहाँ एक छोटा सा जहाज रहेगा जो अन्य उपनिवेशों के नागरिकों को डरा-धमका कर भगाने का काम करेगा और हर छह महीने बाद इसके चालक दल के सदस्यों का तबादला होता रहेगा। यह अंडमान में उननिवेशीकरण का पहला दौर था। यह निश्चय ही कोई सामान्य जगह नहीं थी जहाँ कि आसानी से लोगों को बसाया जा सके और उसे विकसित किया जा सके। कुछ ही द्वीप थे जहाँ पीने का स्वच्छ पानी मिलता था, जबकि यहाँ के आदिवासी लोग बाहरी लोगों को लेकर हमेशा सशंकित रहते थे जिसका निश्चय ही ठोस आधार था और मलेरिया यहाँ समय-समय पर अपना विनाशकारी रूप लेता रहता था। भौगोलिक तौर पर भारत की मुख्य भूमि से 700 किमी पूर्व में स्थित इस जगह पर आवागमन (आने-जाने की) की व्यवस्था एवं जनसंपर्क की व्यवस्था करना एक बहुत बड़ी उपलब्धि थी। समाचारों के आदान-प्रदान में इन दिनों कई दिन, हप्ते और महीने लग जाते थे।

लेफ्टिनेंट ब्लेयर द्वारा कराए जा रहे सर्वे एवं उपनिवेशीकरण के सीमित कार्यकाल (सन् 1789 से 1796 तक) के दौरान बाहरी लोगों का जिसमें प्रमुख रूप से अंग्रेज, भारतीय एवं बर्मा के लोगों का यहाँ के मूल निवासी अंडमानी एवं जारवा जनजाति के लोगों के साथ कई झड़पें हुई। उस समय यह स्पष्ट नहीं हो सका था कि इस द्वीप पर हब्शियों के चार अलग-अलग समूह रहते हैं और वे लोग आपस में एक साथ बैठकर एक खास विषय पर विचार करते थे..., सामान्यतः वे एक-दूसरे को नीचा दिखाने के लिए

मूल निवासी, जंगली और आदिवासी के रूप में संबोधित करते थे। काफी समय बाद सरकार की तरफ से कराए गए जनगणना में इन्हें जारवा, संथाली, शोमपेन, अंडमानी और ओंग जनजाति में विभाजित किया गया। जिस अंडमानी जनजाति के बारे में आपने अब तक पढ़ा है उसके भी एक दर्जन के करीब *समूह* थे जिनमें कुछ तो समुद्र के किनारे रहते थे जबकि अन्य मैदानी भाग में सुदूर जंगलों में रहते थे।

ब्रिटिश सरकार के पुराने रिपोर्ट स्पष्ट रूप से कहती है कि आदिवासी लोग शुरुआती दौर में शत्रुता का भाव नहीं रखते थे। ये लोग गुस्से में आए और शत्रु तभी बने जब बार-बार इनपर आक्रमण हुआ और इन्हें घरों से बाहर निकाला गया। सामुहिक रूप से शिकार कर अपना जीवन-यापन करने वाले इन आदिवासियों के लिए जमीन इनकी जिंदगी का सबसे अहम हिस्सा माना जाता है। पर्याप्त मात्रा में जंगल न होने की स्थिति में आवश्यकता के अनुसार न तो शिकार मिलेगा और न ही भोजन। जैसे-जैसे बाहरी लोग यहाँ आकर जंगलों पर अधिकार कर इनके जमीनों पर कब्जा करते गए जिसके चलते जंगलों के क्षेत्रफल में कमी आती गई वैसे-वैसे इन आदिवासियों के मन में असुरक्षा और भय का माहौल बनता गया।

सन् 1796 में उपनिवेश खाली करने के बाद से अगले 50 सालों तक यहाँ कोई खास काम नहीं हुआ। हाँ दास व्यापार का काम अवश्य ही फलता-फूलता गया। इस बात का कुछ लिखित ठोस प्रमाण है जो यह साबित करने के लिए पर्याप्त है कि यह व्यवसाय दिनों-दिन समृध्दि का शिखर छूता गया जिसके चलते यहाँ उच्च मृत्युदर देखने को मिला। हालाँकि यहाँ उपनिवेश बसाने का काम कुछ ही वर्ष तक चला जो बाद में रुक गया जिसके चलते आदिवासियों ने चैन की साँस ली। लेकिन बाहरी अव्यवहारिक लोगों ने इनके प्रति अपने व्यवहार में कोई बदलाव नहीं लाया और वे इनके साथ पागलों सा बर्ताव करते रहे। वे यहाँ आकर पेड़ों को काटते थे और यहाँ के भोले-भाले लोगों को अपने बंदूक का शिकार बनाते थे। वे किसी भी हाल में अपने स्वामित्व का किसी के साथ समझौता करने को तैयार नहीं थे। लेकिन अपनी भारतीय संस्कृति में अपने परायेपन का कोई भेद नहीं था, सारी चीजें सभी के लिए सामान्य हुआ करती थी और लोग सामुहिक रूप से चीजों का उपयोग किया करते थे।

लेकिन बाहरी लोगों का जहाज अब भी उस रास्ते से आ-जा रहे थे, इसी क्रम में एक बार समुद्री तूफान में घिरकर जहाजें जबरदस्त जादुई अंदाज में टूट कर बिखर गए जो भयंकर तबाही का कारण बना। अंडमान और निकोबार के आस-पास के समुद्री क्षेत्र डूबे हुए जहाजों का कब्रिस्तान बन गया। इसमें से हर एक की अपनी एक रोचक कहानी थी जो बड़ा ही उत्तेजक एवं नाटकीय अंदाज से भरी और साहस एवं दुःख की दास्तान बयाँ करती थी। उनमें से एक था *इमिली* के विनाश की कहानी। विशेष रूप से इस जहाज के टूटने का मतलब था 16 *मूर्ख एवं नासमझ* यूरोपियनों के जीवन बचाने की कहानी है। ये लोग 50 पुरुषों, महिलाओं और बच्चों के दलों में से थे जो कोको द्वीप पर उसके प्रचुर संसाधनों (जो कि झूठा था) एवं स्वस्थ वातावरण के बारे में जानकर आ बसे थे। ये लोग मलेरिया एवं अन्य बीमारियों के चपेट में आकर कमजोरी एवं अनेक प्रकार के मुसीबतों का शिकार हो गए तथा लगभग पागलों सा व्यवहार करने लगे। जिस चालक दल *इमिली* को खोजने की जिम्मेदारी मिली थी, उसने पाया कि ये भटके लोग जबरदस्त तंगहाली की जिंदगी जी हैं।

इस द्वीप के इतिहास में जहाजों की सबसे अनोखी कहानियों में से एक 1844 ई. में *ब्रिटन* एवं *रुनीमेडे* नामक दो जहाजों के एक साथ नष्ट होने की कहानी है। यह समुद्री इतिहास में घटने वाली बहुचर्चित घटनाओं में से एक है जो एक साथ घटी इसमें उनके साहस की भी परीक्षा हो गई जो जहाज से काफी दूर बैठे इसे देख रहे थे। इस घटना पर *टाइटेनिक* जैसी रिकर्ड बनाने वाली एक जबरदस्त फिल्म बनाई जा सकती है।

यह कहानी 12 अगस्त 1844 को शुरू हुआ जब *ब्रिटन* नाम का एक जहाज सिडनी, आस्ट्रेलिया से तीन अन्य जहाजी बेड़े के साथ रवाना हुआ। ये सारे जहाज ब्रिटिश सरकार के सिपाहियों एवं उनके परिवार वालों को लेकर कलकत्ता के लिए रवाना हुए। *ब्रिटन* जहाज पर सवार 34 कर्मचारी, और 430 यात्री थे जिसमें 43 बच्चे भी शामिल थे।

समुद्र विज्ञान की भाषा में मौसम पूरी तरह से खराब था, तेज हवा के साथ बारिश हो रही थी, समुद्र में ऊँची-ऊँची लहरें उठ रही थी एवं जबरदस्त बिजली कड़क रही थी।

इस तरह तेज हवा और समुद्री तूफान के चलते सभी जहाज इधर-उधर बिखर गए। अकेले *ब्रिटन* सिंगापुर पहुँचा और कलकत्ता के लिए लगातार आगे बढ़ता गया।

जहाज में सफर कर रहे सभी व्यक्ति 10 नवंबर की सुबह को जब जगे तो देखा कि मौसम बहुत ही खराब है, चारों तरफ अंधेरा ही अंधेरा है, समुद्री तूफान ने अपना भयावह रूप ले रखा था, कड़ाके की बिजली चमक रही थी और बादल लगातार जोर-जोर से गरज रहे थे। रात होते-होते हवा और भी तेज होती गई और तेज आँधी के साथ चमक रही बिजली जहाज के चारों ओर छिटक रही थी। समुद्र में काफी ऊँची लहरें उठ रही थी और जहाज अपना संतुलन खो रहा था। उस रात जैसे ही यह टकराया तो चालक दल के लोगों ने सोचा कि यही अंतिम क्षण साबित हुआ। निश्चय ही वे लोग बहुत आशावान नहीं थे। तेज रफ्तार के साथ पानी जहाज में आने लगा और केबिन में जमा होने लगा, इधर डेक पर यात्रीगण भीग रहे थे और वह काली रात भयभीत कर देने वाली थी जिसके चलते जहाज पर हर तरफ चीख और चिल्लाहट

का माहौल बन गया था। लेकिन चालक दल के सदस्य बहुत ही कुशल और अनुभवी थे और साथ ही दूसरी तरफ औरतों का भाग्य भी काम आया। जहाज पर सवार हर व्यक्ति के खुशी का हम महज अंदाजा लगा सकते हैं जब उन्होंने अगली सुबह किनारे पर अपने आप को सुरक्षित पाया। वे लोग उष्ण कटिबंध के किसी दलदली द्वीप के किनारे पर थे। यह आश्चर्य के लिए काफी था लेकिन अभी बहुत कुछ आना बाकी था, क्योंकि उनका अपना एक दल था! वहाँ तूफानी मौसम के बावजूद दूर से किसी धुंधले प्रकाश की झलक मिल रही थी मानो किसी भूत की तरह दूसरे जहाज की छाया नजर आ रही हो।

नजदीक आने पर पता चला कि यह *रूनीमेडे* है जो कि 20 जून को इंग्लैंड से सैनिकों और कुछ औरतों एवं बच्चों के साथ रवाना हुआ था। यह एक लंबा एवं कठिनाइयों से भरी यात्राओं में से एक डरावना और दिल दहला देने वाला था। *रूनीमेडे* तीन तल वाला एक जहाज था जिसके विभिन्न तल पर तैरने वाली छोटी-छोटी कस्तियाँ थी। यह किसी तरह से हवा के सही रूख को पकड़ने में असफल रहा। लंबी यात्रा के चलते इस जहाज का राशन समाप्त होने की स्थिति में था जिसके चलते यात्रियों के बीच बर्चस्व की लड़ाई जैसा माहौल बन गया था। बहुत खूब, अब उनका बुरा दौर समाप्त होने वाला था, उन लोगों ने भी भूत की छाया के समान किसी दूसरे जहाज की छवि देखी पर दूर से नहीं बल्कि नजदीक से। जल्द ही उन्हें *ब्रिटन* पर सवार होने के लिए आमंत्रित किया गया और उन्हें भोजन एवं कपड़े दिए गए तथा उन्हें सुविधासंपन्न किया गया। राहत सामग्री से भरा एक जहाज इनकी सहायता के लिए भेजा गया जिस पर पर्याप्त मात्रा में राशन एवं अन्य सुविधाजनक वस्तु शामिल थी। इसे देखते ही मुसीबत में फँसे सभी यात्रियों के बीच खुशी का माहौल बन गया और उस डूबते जहाज को छोड़कर थके-हारे सभी यात्री एवं चालक दल के सदस्य दूसरी जहाज पर सवार होकर सुरक्षित कलकत्ता के लिए रवाना हो गए।

काला पानी

साठ साल बीत जाने के बाद एक बार फिर से अवशेष बचे भवनों पर कब्जा करने की नीयत से एवं वृक्षारोपन की ओर लोगों का ध्यान गया। हब्शी लोग प्रतिशोध की भावना से किसी काम बस समुद्र के किनारे आने वाले भोलेभाले आदिवासियों को दास व्यापार के लिए लगातार पकड़ने का काम कर रहे थे। इस तरह इन पर अंधाधुंध बढ़ रहे हमले की सच्ची या फिर कई बार मनगढ़ंत कहानी लगातार और तेजी से आ रहा था। जनवरी 1853 में *फिजे बक्स* के तीन समुद्री यात्री की हत्या हो गई। इसके साथ ही कमोरता से एक अंग्रेज महिला और उसके बच्चे की हत्या की भी कहानी सुनने को मिली। 1856 में आठ चीनी व्यापारी, जो संभवतः पक्षियों के घोंसले के व्यापारी थे, की हत्या या तो ओंग जनजाति के लोगों द्वारा किया गया या फिर अंडमानी द्वारा। दक्षिणी निकोबार के नीचले हिस्से में डेनमार्क की सरकार ने 1847 में मलेरिया और कालरा की वजह से अनेकों मिशनरी एवं सरकारी कर्मचारियों के मरने से परेशान होकर अपना कदम पीछे हटाया।

अंग्रेज *साहबों* ने अनुभव किया कि इस अत्यंत असुरक्षित समुद्री मार्ग पर लगातार खतरा बढ़ रहा है जिसके चलते परोशानी बढ़ रही है। ऐसे में एक बार फिर से 1856 में अंग्रेज सरकार ने इस द्वीप पर उपनिवेश बसाने की ठानी ताकि वह अपने नागरिकों, जहाजों एवं उसके चालक दल के लोगों को समुद्री लुटेरों के साथ ही तूफान के दौरान होने वाले किसी प्रकार के नुकसान से बचाया जा सके। इस द्वीप समूह का अधिपति होने के नाते अंग्रेजों का मानना था कि यह उसका अधिकार क्षेत्र होने के साथ ही

कर्तव्य भी बनता है कि वे ऐसा कुछ करें ताकि सुरक्षा का माहौल कायम हो सके जिसके लिए जोरों से आवाज भी उठ रही थी और सुरक्षा का माँग किया जा रहा था। इन्हीं महत्त्वपूर्ण आवाजों में से एक था अरकान के कमिशनर कैप्टन हेनरी होपकिन्सन का। उन्होंने ब्रिटिश सरकार को 1856 में लिखा कि अपने भौगोलिक स्थिति, सुंदरता और संसाधन तीनों ही दृष्टि से अंडमान और निकोबार ब्रिटिश साम्राज्य के लिए बहुत ही महत्त्वपूर्ण और वांछनीय है, इसलिए इस भाग को दरकिनार करने की जगह इस पर अधिकार जमाया जाय ताकि जानवरों की जिंदगी जीने वाले इन मुट्ठी भर निग्रो लोगों का अपने फायदे के अनुसार प्रयोग कर सकें। वे आगे लिखते हैं कि यह द्वीप एकदम ही व्यापार के सही रास्ते पर है जहाँ से कलकत्ता, मद्रास, अक्याब, रंगून, मौलमीन, पेनांग और सिंगापुर जैसे व्यापारिक जगहों से सामानों का आयात-निर्यात हो सकता है। इसके बेहतरीन बंदरगाह और उपजाऊ जमीन ने कैप्टन होपकिन्सन को अचंभित कर दिया था जिसके चलते उसने ब्रिटिश सरकार को इसे विकसित करने की जगह यहाँ की जमीन से अपना फायदा निकालने की सलाह दी। कैप्टन होपकिन्सन एवं अन्य के अनुसार इसका एक मात्र उपचार इस द्वीप पर फिर से अधिकार करने से है। इसलिए इस समय ऐसा करने के लिए वृहद स्तर पर दिमागी घोड़ा दौराना होगा और एक निश्चित कार्यक्रम की रूपरेखा बनानी होगी। एक बड़े पैमाने पर कैदियों के समूह को तैयार करना होगा जिसका केंद्रबिंदु कोलोनी का मध्य होगा जो अपने-अपने किनारे से आगे बढ़ेगा और आगे चलकर सभी आपस में समाहित हो जाएगा। जैसा कि उन लोगों ने देखा कि कैदियों के समूह का उपनिवेशीकरण एक नई कोलोनी बसाने का सुंदर तरीका है क्योंकि यह जंगलों को साफ करने एवं भवन निर्माण के लिए जिसमें अन्य सभी प्रकार का काम शामिल है जिसके लिए यह मुफ्त का मजदूर उपलब्ध कराता है। सुमात्रा, पेनांग, सिंगापुर एवं बर्मा में पहले से ही कैदियों के व्यवस्थित जिंदगी के लिए काम शुरू हो चुका है। बड़े पैमाने पर यह सोचा जाता है कि 1857 में पहले स्वतंत्रता संग्राम अर्थात् सिपाही विद्रोह के कैदियों के लिए स्थाईकरण का काम अथवा जासूसी का काम करने वालों को सुरक्षित करने के लिए ऐसा किया गया, जो कि सही नहीं था।

इसका मुख्य उद्देश्य ब्रिटिश जहाजों, उसके चालक दल के लोगों एवं यात्रियों को क्रूर लुटेरों से सुरक्षा देना तथा उन लोगों को अपना दास बनाना था।

इस दूसरे उपनिवेशीकरण की योजना एवं रूप रेखा पहले वाले की अपेक्षा काफी अधिक विस्तृत था। इस बार का उद्देश्य पूरे क्षेत्र पर अधिकार करने एवं लोगों को व्यवस्थित करने का काम एक सुसंगठित ढंग से होना था। वे कैदी जिन्हें कुछ आजादी के साथ शहर के किसी भी भाग में रहने की इजाजत दी जाती थी, उन्हें अपने परिवार को स्वदेश से अपने पास बुलाकर रखने की छूट थी और इसके लिए सरकार से उसे मुफ्त जमीन मिलती थी। वे इस द्वीप पर एक नई जिंदगी की शुरुआत कर सकते थे। हालाँकि यह एक काम करने लायक योजना थी पर जॉन बैरी और जे. पी. वॉकर जैसे ओछी मानसिकता के कुछ लोगों ने शुरुआती कुछ वर्षों में इस पर काम नहीं होने दिया। सरकार बहुत दूर कलकत्ता में बैठी थी जिसके लिए यह संभव नहीं था कि वह इनकी क्रूरता पर अंकुश लगा सके, लेकिन इन लोगों ने काफी हद तक सरकार की छवि को बर्बाद कर दिया।

इसलिए अब हम अंडमान के एक दूसरे महत्त्वपूर्ण तारीख 11 दिसंबर 1857 पर आते हैं। दूसरा युद्धपोत *सेमिरामिस* जिस पर कैप्टन मोट, डॉ. प्लेफेयर एवं लेफ्टिनेंट हीथकोट की सर्वे टीम सवार थी, अंडमान पहुँची। उनके साथ जल सेना के 20 यूरोपीय समुद्री यात्रा विशेषज्ञ थे जो आदिवासियों के विरोध का सामना करने के लिए आए थे। उन्होंने अपनी रिपोर्ट जनवरी 1858 में सरकार को दी जिसमें इस बात का अनुमोदन किया गया कि पहले उपनिवेश के स्थान पुराने बंदरगाह में फिर से नई कालोनी बसाई जाए। उन्होंने इसका नया नाम दिया पोर्ट ब्लेयर। मूल इमारत को बने 70 साल हो गया था जब यहाँ के बदले उपनिवेश बसाने का काम उत्तर की ओर चला गया था। इतने दिनों तक देख रेख न होने के कारण ये इमारतें धीरे-धीरे गिरकर नष्ट हो रहे थे और समुद्र की लहरों ने इसके ईंटों एवं पत्थरों को जहाँ-तहाँ बिखेर दिया था।

15 जनवरी 1858 को सरकार ने कैप्टन एच. मान को लिखा कि वे यहाँ रानी (हर मेजेस्टी) और ईस्ट इंडिया कंपनी के नाम पर एक बार फिर से यूनियन जैक को फहराए।

इसी तरह निकोबार को भी 1869 में झंडा फहराते समय अन्य जगहों की तरह शामिल कर लिया गया। कैप्टन मान को पोर्ट ब्लेयर का सुप्रिटेंडेंट नियुक्त किया गया और उन्हें उपनिवेशीकरण का काम तेजी से आगे बढ़ाने के लिए कहा गया ताकि और भी अधिक कैदियों को यहाँ लाया जा सके। ब्रिटिश सरकार से लोहा लेने वाले क्रांतिकारियों की संख्या अब तक काफी बढ़ चुकी थी और लगातार बढ़ ही रही थी और सरकार उन्हें जीवन भर के लिए काला पानी की सजा दे रही थी जिसके लिए अंडमान को जाना जाता था। कैप्टन मान मौलमीन, बर्मा और अन्य जगहों पर कैदियों के सुप्रिटेंडेंट रह चुके थे और इन्हें जेल मामलों की व्यवस्था का अनुभव भी था। उन्होंने पाया कि वे अगले छह सप्ताह में पंजाब के 218 क्रांतिकारियों को लेने में समर्थ होंगे! इसका मतलब था कि आवास, भोजन की व्यवस्था, पानी और इलाज की सुविधा (यूरोपियन और भारतीयों के अलग डॉक्टर) और भी बहुत कुछ की तैयारी हो चुकी थी। उन्हें सुरक्षाकर्मियों के
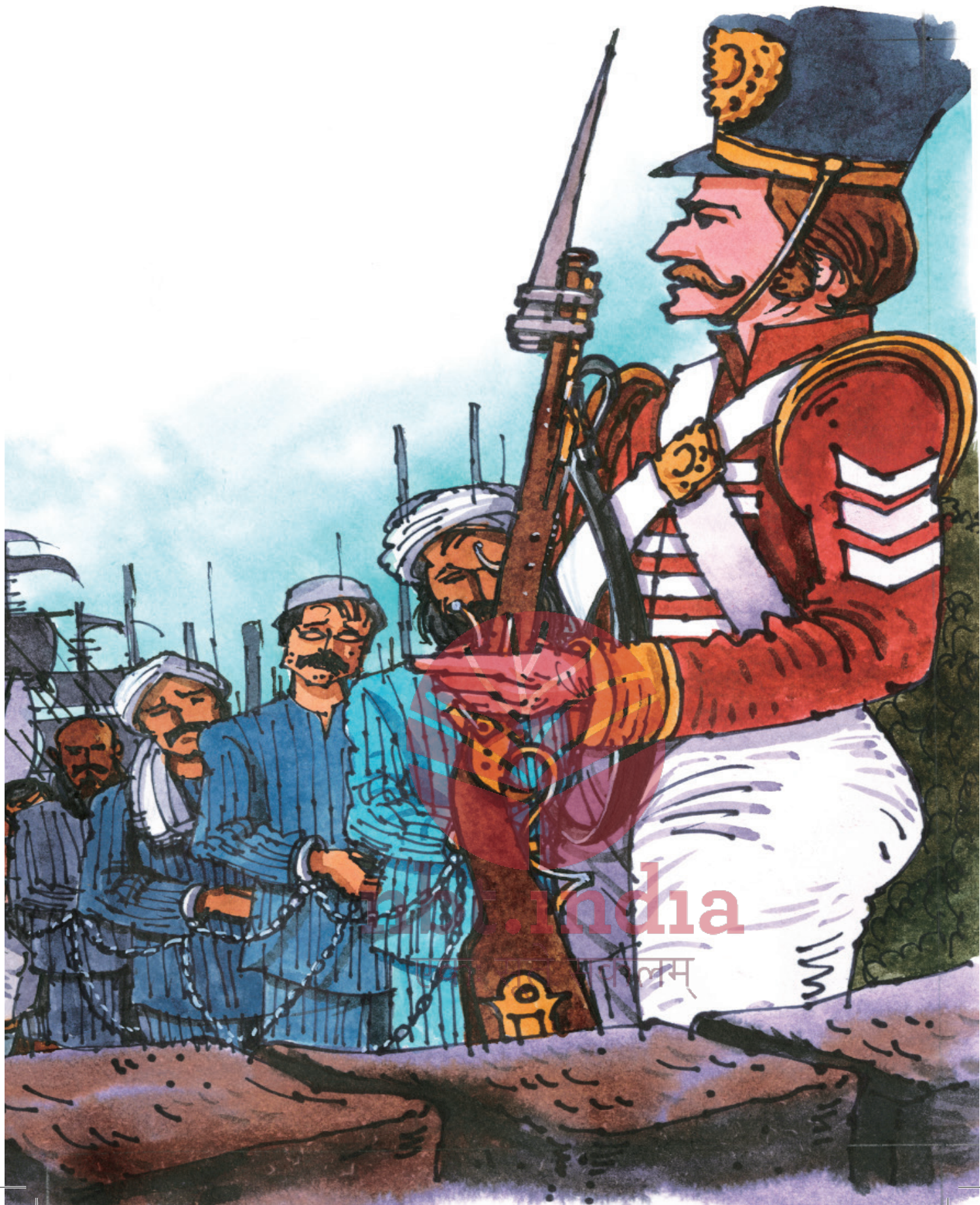
जहाज अथवा *प्लुटो* पर रुकने का आदेश मिला और कहा गया कि वे एक तरफ से राशन का सामान दें (संभवतः उनके अपने सुरक्षा कारणों से) और जैसे ही एक बार इस उपनिवेश का सारा काम व्यवस्थित हो जाय वे इस द्वीप को छोड़ दे। डॉ. जे. पी. वॉकर इनसे यहाँ के नए सुप्रिटेंडेंट के रूप में कार्य भार लेंगे।

इसी साल मार्च में *सेमिरामिस* एक बार फिर से पोर्ट ब्लेयर के बंदरगाह के लिए रवाना हुआ लेकिन इस बार यह अलग-अलग कार्गो के साथ। इस पर उम्र कैद की सजा पाए 200 कैदी सवार थे। वे लोग अंडमान द्वीप के खोजकर्त्ता थे, जिनमें से एक पोर्ट ब्लेयर के जंगलीघाट का वर्तमान में एक नागरिक प्रथम स्वतंत्रता संग्राम के अमर शहीद मंगल पांडे के परपोते हैं।

कैप्टन मान की योजना थी कि कैदियों के कई वर्ग हों जो उनके अपराध, व्यक्तित्व और कोई कैदी किसी अपराध को कितनी बार करता है, इस बात पर निर्भर करेगा। चौथे वर्ग के कुछ कैदियों पर समयानुसार निगाह रखी जाय और यदि आवश्यक हो तो उसके पैरों में बेड़ी भी लगाई जाए। वर्ग दो के कैदियों को *सरदार* और *टिंडल* बनाया जा सकता है और उसे अन्य कैदियों पर नजर रखने को कहा जा सकता है। इस तरह अच्छा व्यवहार करने वाले को पुरस्कार दिया जाए और बुरे बर्ताव करने वाले कैदी को सजा। इस तरह जब ये कैदी अपनी सजा पूरा कर ले तो इनके परिवार वालों को उनके मूल स्थान से मंगवाया जाय और इस उपनिवेश को बसाया जाय विकसित किया जाय। 1872 में सर डोनाल्ड मार्टिन स्टूवर्ट को सुप्रिटेंडेंट से यहाँ का चीफ कमिशनर (सी सी) बनाया गया जो जापानियों के आने तक अंग्रेज सरकार का इस द्वीप पर आधिपत्य समाप्त होने तक उनके द्वारा बनाए गए इस द्वीप के 24 में से पहले कमिशनर थे। वे लोग आज भी सी सी द्वारा ही भाषित हो रहे हैं।

जिन जगहों को चुना गया था वे दक्षिणी अंडमान के सुदूर दक्षिणी किनारे जैसे अबेरदीन और चथम है। बाद में वाइपर द्वीप खतरनाक सजायाफ्ता कैदियों का आश्रय बन गया। जंगलों को काटने की एक जबरदस्त मुहिम चलाई गई और इस दौरान काफी पेड़ों को भी काटा गया। अंडमानी और जारवो जनजाति के लोग देख रहे थे कि उनके

आवास यानि जंगलों को बर्बाद किया जा रहा है। इस घटना ने उनके मन में गुस्सा और खीज भरने का काम किया जो बाद में शत्रुता के रूप में फूटा, जिसे अंग्रेजों ने नहीं समझा और उन्हें बड़ी निर्दयता से कुचल दिया।

समुद्र तट पर पानी की कमी ने वाकर को सरकार से मुख्यालय को रोस स्थानांतरित करने का अनुरोध करने पर मजबूर कर दिया जो कि इस बंदरगाह के प्रवेश द्वार पर एक छोटा-सा द्वीप है। सरकार इस पर सहमत हो गई। रोस बहुत ही सुंदर पसंद था। यदि कोई कैदी यहाँ से निकलने में सफल हो भी जाता था तो उसे दक्षिणी अंडमान के किनारे तक पहुँचने के लिए एक मील तक तैरना होता था, उसके बाद बहुत दूर तक भटका देने वाले घने उलझे हुए जंगल जो शोषणकर्ता, शोर करने वाले और बंधक बना लेने वाले आदिवासियों से भरे जंगल की पगडंडियों से होकर गुजरना होता था। लेकिन यह उनके प्रयास के रास्ते में रुकावट नहीं बन सकती थी क्योंकि कैदियों में काफी हद तक इस बात की फुसफुसाहट होती रहती थी कि यदि तुम यहाँ से उत्तर दिशा में भागते हो तो वर्मा पहुँच जाओगे और वहाँ तुम राजा की नौकरी आसानी से पा लोगे। यही उन कैदियों का सपना या फिर उद्देश्य होता था जिसने कई कैदियों को चतुर और आशावान बनाया। इन समस्त गलत कामों का एक मात्र मुख्य कारण बना डॉ. वाकर। वह इतना अधिक क्रूर था जितना कि अवास्तविक दुष्ट होता है, और उसके समय में भागने का प्रयास करने का आम तौर पर मतलब होता था फाँसी की सजा। 86 कैदियों को उसने महज एक दिन में फाँसी के फंदे पर लटकवा दिया था जिसके चलते सरकार की तरफ से कलकत्ता में विरोध जताया गया। उसकी अन्य पसंदीदा सजा थी हाथों में हथकड़ी डालना, पैरों में बेड़ी लगाना और गले में कड़ी पहनाना, इसके साथ ही एक साथ कई कैदियों को लोहे की जंजीर में जकड़ देना।

लेकिन इन तमाम दिल दहला देने वाली घटनाओं की एक लंबी कड़ी के बावजूद वहाँ से कैदियों के निकल भागने की कोशिश में किसी प्रकार की कमी नहीं आई। सामूहिक निकल भागने की कोशिश की कहानियों में सबसे चर्चित है दूधनाथ तिवारी की कहानी जो खुद उस भागने वाले समूह का एक सदस्य थे। उस समूह में से अधिकांश या तो

भूखमरी के शिकार होकर मर गए या फिर अंडमानियों द्वारा मार दिए गए। जंगल में तिवारी किसी तरह से कई सप्ताह तक भूखे और घायल अवस्था में तब तक रहे जब तक कि उन्हें अंडमानियों के एक समूह ने अपना नहीं लिया। वह उन अंडमानी आदिवासियों के साथ दो साल तक रहे और एक आदिवासी लड़की से शादी भी कर ली, उसके साथ उन्हें एक बेटा हुआ। लेकिन उसने एक बार फिर अपने शरण देने वाले के गिरोह से भागने की ठानी जब उन्होंने सुना कि अंडमानी लोग कैदियों वाले उपनिवेश पर आक्रमण करने वाले हैं। वे लोग ब्रिटिश बैरक एवं अबेरदीन के कैदियों वाले उपनिवेश पर, जिसमें से एक कारागार उनका अपना घर रहा था पर आक्रमण करने जा रहे थे। उसके दोस्त लोग, परिचित और रखवालों का जान बहुत अधिक खतरे में था क्योंकि अंडमानियों की योजना बहुत बड़े हमले की थी। इसके चलते दोनों तरफ से मौत का तांडव हो सकता था।

मध्य रात्रि को दूधनाथ तिवारी चोरी छिपे बैरक जा पहुँचा और ब्रिटिश अधिकारियों को सारी योजना बता दिया। वाकर तेजी से हरकत में आ गए और सुरक्षाकर्मियों को तैयार रहने का हुक्म दिया। रोस और अबेरदीन के बीच सुरक्षाकर्मियों के जहाज को ला खड़ा किया। जब अंडमानियों ने उन पर आक्रमण किया तो देखा कि अंग्रेज लोग बहुत अच्छी तरह से तैयार थे जिसके कारण भारी तादाद में अंडमानियों का जनसंहार हुआ। दूधनाथ को आजाद कर दिया गया, उसकी सजा को समाप्त कर दिया गया और वे एक स्वतंत्र नागरिक बन गए।

जैसा कि हमने पहले भी कहा है, जिस समय उपनिवेश बसाने का काम किया शुरू हुआ था तब अंडमानियों की तरह जारवा जनजाति के लोग भी शांत विचार के होते थे, यहाँ तक कि वे सबके साथ दोस्ताना व्यवहार करते थे। कई अधिकारियों और निरीक्षकों ने इस बारे में लिखा है कि किस तरह इन आदिवासियों का बाहरी लोगों द्वारा लगातार शोषण किए जाने एवं डरा-धमकाकर काम लिए जाने के चलते व्यवहार बदला। इन्हीं लिखने वालों में से एक लेखक थे एम वी पोर्टमेन, जो इस द्वीप के बहुत ही सज्जन अंग्रेज प्रशासकों में से एक थे। वे 1889 से 1900 ई. तक आदिवासियों के साथ अंग्रेजों के

संबंध के कार्यकारी अधिकारी रहे। अपनी लेखनी में वे इस उपनिवेश के अधिकारियों और यहाँ तैनात किए गए सुरक्षाकर्मियों का आदिवासियों के प्रति अपमानजनक व्यवहार का बहुत बड़े आलोचक थे। आदिवासियों जिन्हें अपने ही अधिकार क्षेत्र से इन लोगों ने बेदखल कर दिया था के हित के वे सबसे बड़े समर्थक थे। तकरीबन रातों-रात जंगल में शांति से रहने की जगह आतंक का पर्याय बन जाने वाली स्थिति उत्पन्न हो गई। दोषी सुरक्षाकर्मी इन्हें डराने-धमकाने और दूर रखने के इरादे से इन पर मास्केट से गोली की वर्षा कर देते थे। इसके चलते कई तो मौत के घाट उतर जाते और दूसरों के लिए 'एक मिशाल कायम' कर जाते थे। अंडमानी और जारवा लोगों की हत्या कई बार ये लोग अपने मनोरंजन के लिए ठीक उसी तरह किया करते थे जिस तरह कि कोई शिकार के लिए पशु-पक्षियों का किया करते हैं।

मातृभूमि भारत पर, अंग्रेजों के शासन का विरोध विकराल रूप ले चुका था। राजनैतिक बंदियों की संख्या लगातार बढ़ रहा था। अंडमान और निकोबार में कैदियों की जो संख्या 1858 ई. में 300 या 400 थी वह 1892 ई. में 12,000 (इनमें 803 महिला कैदी थी) पहुँच गई। यह वही समय था जब सरकार के मेहमानों के लिए और भी अधिक आवासों की जरूरत थी, कभी-कभी लोग जेल में होते थे तो यह बात हँसी-मजाक के लहजे में कहा जाता था। सेल्युलर जेल 1896 से 1906 के बीच बनवाया गया। अंडमान और निकोबार के बच्चे-बच्चे इस घिनौने इतिहास के बारे में जानते हैं क्योंकि आज के समय में यह जगह दुनिया के बड़े पर्यटन केंद्रों में से एक है। जो क्रूरता इस जेल की चाहरदीवारी के भीतर की गई उसके बारे में सोचना भी कठिन है। उसी तरह कैदियों के हिम्मत भी उम्मीद से कहीं बढ़कर थी। जोन बैरी, इस जेल की इतिहास के उतने ही क्रूर और निर्दयी वार्डन थे जितना कि रोस के मि. वाकर। हजारों स्वतंत्रता सेनानियों ने यहाँ अपना स्वास्थ्य, अपना होशो हवास और अपना-अपना जीवन तक दाँव पर लगा दिया और इस सब के पीछे उनका एक ही मकसद होता था 'भारत की स्वतंत्रता'। इसमें भारत के सभी तबके के लोग राजा से रंक (कूली) तक शामिल हुआ करते थे।

सेल्युलर जेल और इसके स्वतंत्रता सेनानी कैदियों के बारे में लेकर अनेकों पुस्तकें उपलब्ध हैं लेकिन हम उसमें विस्तार से नहीं जा रहे हैं। हजारों की संख्या में कैदी मारे गए, हजारों को आदिवासियों की कठिनाइयों और अपमान का सामना करना पड़ा। जब मैं एक दिन सुबह सूरज के उजाले में पूरा जेल घूमा तो मैंने पाया कि यह बात बड़ी मुश्किल से कोई विश्वास करेगा कि इस जेल की चाहरदीवारी के भीतर इतने सारे दुःखद घटनाएँ घट चुकी है। यहाँ की काल कोठरियों में यह बड़ा ही दिलचस्प और गौर करने वाली बात है कि वीर सावरकर जैसे महान स्वतंत्रता सेनानी ने भी अपने जीवन का कुछ समय यहाँ बिताया है जो महज 14 साल की उम्र में स्वतंत्रता संग्राम में कूद पड़े थे। जब वे 22 साल के थे तो 1905 ई. में बंगाल के विभाजन की घोषणा के विरोध में उन्होंने सफलता पूर्वक विदेशी कपड़ों की होली जलाने के काम को नेतृत्व दिया था। एक बार किसी ने उनसे पूछा कि क्या वे सौभाग्य से 50 वर्षों तक जीवित रहेंगे तो उन्होंने बड़े ही शांत अंदाज में जवाब दिया कि क्या यह ब्रिटिश हुकूमत 50 सालों तक चल पाएगा? जबकि वे दो आजीवन कारावास की सजा एक साथ भुगत रहे थे। इसमें कोई शक नहीं कि अंडमान जेल के दूसरे महान कैदी का नाम आजाद हिंद फौज (इंडियन नेशनल आर्मी) के संस्थापक, नेताजी सुभाष चंद्र बोस का है जिनका मानना है कि ‘‘दुष्टों के अपराध से समझौता करने का मतलब होता है कि अन्याय और गलत काम के साथ समझौता करना।’’

1857 के स्वतंत्रता संग्राम के बाद से वहाबी बंधु, मोपला बंधु एवं बंगाल के सशस्त्र क्रांतिकारी, महाराष्ट्र एवं अन्य अनेक राज्यों के पुरुष और नारी दोनों ही स्वतंत्रता सेनानी के खेमे में शामिल होने लगे और देश की स्वतंत्रता के लिए सामुहिक उद्देश्य से सक्रिय होकर लड़ने लगे। उनके हिम्मत और आत्मबल को सेल्युलर जेल की कठोर यातना भी कमजोर नहीं कर सकी। इससे परे उन्होंने जेल की बदतर स्थिति के खिलाफ आवाज उठाई। उनके भूख हड़ताल और अन्य प्रकार के शांतिपूर्ण विरोध ने सबकी सहानुभूति और संवेदना अर्जित की (बटोरी) जिसमें उनके अंग्रेज अधिकारी भी शामिल थे जिसके परिणामस्वरूप कइयों को उनकी अपनी मातृभूमि वापस भेज दिया गया।

जबकि, यहाँ से एक जल मील की दूरी पर रोस द्वीप था जिसे 'पूरब का पेरिस' कहा जाता है। आज भी रोस अपने बुरे सपने में खोया एक पुराने बड़े शिकारी घर की तरह लगता है। पुराने पेड़ों के टेढ़े मेढ़े जड़ एवं गाँठदार तने, इसके मेहराव पर चिड़ियों के घोंसले और मधुमखियों के छत्ते, चिड़ियों के चीं चीं करने की आवाज और बिखरे हुए पत्थर इसके विनाश की कहानी कुछ इस कदर कह रही है कि मानो वर्षों पहले के दरवाजे और खिड़कियाँ किसी शमशान की तरह बीमारी के चलते या फिर तीरों से छलनी होने के चलते अप्राकृतिक ढंग से हुए मौत की उदासी भरी कहानी कह रही हो।

लेकिन सौ साल पहले यह एक बहुत ही लाजवाब उपनिवेश था जहाँ हर प्रकार के एशोआराम की वस्तुएँ थी एवं चारों ओर सुंदरता की छटा बिखेर रही थी जो व्यापार को आकर्षित करने में समर्थ था। एक से एक सुंदर भवनें बनाए गए थे क्योंकि अनेकों कैदीगण इसके लिए मुफ्त में मिलने वाले मजदूर होते थे। लकड़ियों के सामान की खास नक्कासी, उस पर चित्र उकेरने के लिए तथा छतों के सायवान का काम कराने, खिड़कियों एवं दरवाजों की नक्कासी का विशेष काम कराने के लिए खास बढ़इ और इससे संबंधित अन्य पारंगत मजदूर बर्मा से लाए जाते थे।

इसके बावजूद, यहाँ तक का कठिन पहुँच एवं सीधे रास्ते पर न होना तथा बीमारी और आदिवासियों से लगातार दुश्मनी के खतरे के चलते रोस को निश्चय ही विशेष दर्जा दिया जाता था। यहाँ दो चर्च, एक क्लब, एक अस्पताल और कंसर्ट हॉल था। यहाँ के बैरक में बने लाइट हाउस और टावर की मदद से इस रास्ते से गुजरने वाले सभी जहाजों पर चौबीसों घंटे कड़ी नजर रखी जाती थी। इसके टावर ऐसी जगह पर बनाए गए थे कि उस पर चढ़कर आसानी से 20 मील दूर तक समुद्र पर नजर रखा जा सके। यदि कोई जहाज दिख जाता तो उसकी सूचना सभी विभागों को देने के लिए एक झंडा फहराया जाता था ताकि समय रहते सभी आवश्यक व्यवस्था कर लिया जाय और उसे सही ठिकाने तक लाया जा सके। अभी टेलिफोन का आना बाकी था और सभी प्रकार की सूचना को देने का साधन संकेत ही हुआ करता था जो एक खास तरह का संकेत हुआ करता था। वहाँ 24 घंटे सूचना की सेवा देने के लिए 30 संकेतक हुआ करते थे।

सेवा समाप्त होने पर सरकारी कर्मचारी, अधिकारी और उसके परिवार वालों के लिए अनेक तरह के मनोरंजन की सुविधा होती थी जिसमें उन्हें अपने पसंद का चुनना होता था। वहाँ समुद्र के सुरक्षित किनारे पर नमकीन पानी का एक तरणताल (स्विमिंग पुल) हुआ करता था जो मजबूत दीवार से घिरा था और यह दीवार समुद्र की लहरों को रोकने का काम किया करता था। वहाँ स्क्वैश और टेनिस कोर्ट भी हुआ करता था, इसके अलावे चिड़ियाघर और एक समुद्री कछुए का एक टैंक हुआ करता था जिसमें पालतू कछुए को भोजन दिया जाता था। इंग्लैंड के महान विंडसर कास्टल के बाद यहाँ के बैरेक का प्रारूप तैयार किया गया। चीफ कमिश्नर के घर पर हमेशा दावत और नृत्य हुआ करता था जिसके लिए लकड़ी का नाचने वाला सुंदर फर्श, थिएटर संचालन के लिए एक स्टेज और ऑरकेस्ट्रा के लिए एक स्थान हुआ करता था जहाँ गायकों की एक छोटी मंडली अतिथियों के सम्मान में चमकदार सिल्क के कपड़े और साजो-सामान के साथ गाने-बजाने का काम किया करते थे। रोस को एक बेहतरीन जगह के रूप में निखारने के लिए, ताकि दुनिया में इसे अपने तरह का एक मात्र अजूबा द्वीप बनाया जा सके और इसे बेहतरीन शहरों में सबसे बेहतर देखा जा सके, इसके लिए इसके भवन बनाने वाले (शिल्पी) तथा बिल्डर को यह खुला छूट था कि वह दुनिया के सबसे बेहतरीन लकड़ी का चुनाव कर सके तथा इटालियन टाइल्स और अन्य विलासिता संबंधी सामानों की माँग कर सके जिसे आयात कर उन्हें उपलब्ध कराया जाएगा और ऐसा किया भी गया।

सही मायने में यह एक शहर था न कि जंगल में बसाया गया कामचलाउ उपनिवेश। यह हर तरह की सुविधाओं से भरा पूरा एक शहर था जहाँ अधिकारी लोगों के अलावे आवास की व्यवस्था, गेस्ट हाउस, पोस्ट एवं टेलिग्राम ऑफिस, ट्रेजरी (कोशागार), स्टोर, गोदाम, आटा मिल, प्रिंटिंग प्रेस, बेकरी, झील, शुद्ध पेय जल की व्यवस्था एवं बर्फ के कारखाना, बाजार और अस्पताल जिसमें अंग्रेजों, भारतीयों और कैदियों के लिए अलग-अलग खंड थे। यहाँ बिजली की भी व्यवस्था थी जिसके लिए पावर हाउस और ब्वॉयलरों को इंग्लैंड से मँगवाया गया था। वहाँ यूरोपियनों के बच्चों के पढ़ने के लिए एक छोटा सा स्कूल भी था और यह एक बड़ा ही दिलचस्प बात है कि इस स्कूल के

शिक्षकों में से एक थी सेल्युलर जेल के क्रूर वार्डन जॉन बैरी की बहन मिस बैरी। वह अपने भाई से बिल्कुल ही अलग स्वभाव की थी और इस तरह उनके छात्रों ने उन्हें बहुत लंबे समय तक याद किया और एक अच्छे शिक्षक के रूप में प्यार भी किया।

रोस निश्चित ही किसी जादुई परियों के शहर के जैसा देखने में लगता था। यहाँ के जंगल, तारे, बेहतरीन धब्बा रहित शीशे की खिड़कियाँ, ये सभी मिलकर एक खुबसूरत वातावरण का निर्माण करते थे। जंगलों से आने वाली आवाजें ऑरकेस्ट्रा की ध्वनि के साथ मिलती थी तो साफ समुद्र से निकलने वाली गंध ब्रेड और केक बनाने वाली बैकरी से निकलने वाली खुशबू से मिलती थी और इस तरह के वातावरण का निर्माण करते थे कि यहाँ रहने वालों को स्वर्ग के सुख का अनुभव कराता था। यहाँ वह क्षण बड़ा ही रोमांचकारी होता था जब कोई जहाज दिखाई देता था और झंडे फहराए जाते थे और खुशी के मारे लोग जहाज घाट पर दौड़कर पहुँच जाते थे ताकि वे इंग्लैंड या फिर मातृभूमि भारत से आई अपने परिचितों के संदेश या फिर चिट्ठी अथवा अपना पति, पत्नी और बच्चे को लेने पहुँच जाते थे।

निश्चय ही, यहाँ की अनेकों यादगार घटना में से एक घटना है लॉर्ड एवं लेडी मायो का आगमन, जो फरवरी 1872 में *ग्लासगो* पर सवार होकर आए थे। इस जहाज ने रोस के बंदरगाह पर अपने दो सुरक्षा जहाज *डक्का* और *नेमिस* के साथ लंगर डाला था। लॉर्ड मायो यहाँ कैदियों की स्थिति को देखने आए थे और उसकी सुविधा बढ़ाने की संभावना पर भी उन्हें ध्यान केंद्रित करना था।

लॉर्ड मायो ने भारी संख्या में पुलिस बल और सेना के जवानों की निगरानी में रोस द्वीप का दौरा किया। उनके साथ भारी संख्या में सशक्त और अतिमहत्वपूर्ण लोग थे, जिसमें ब्रिटिश बर्मा के चीफ कमिश्नर भी शामिल थे। उसी दिन दोपहर को वे वाइपर द्वीप जहाँ वाकई बड़े खतरनाक अपराधियों को बसाया गया था, वे वहाँ और भी जोशीले अंदाज में मुस्तैद सुरक्षाकर्मियों की निगरानी में घूमने गए। ऐसा कहा जाता है कि लॉर्ड मायो ने भारी संख्या में सुरक्षाकर्मियों की उपस्थिति का विरोध भी किया और बोले कि इन लोगों (कैदियों) को अधिक स्वतंत्रता दिया जाय ताकि ये लोग खुद उनके

पास आकर उनसे बात कर सकें। वास्तव में वे समस्या की जड़ एवं उपनिवेशीकरण की जरूरतों को जानना चाहते थे और इसके लिए वे खुले दिमाग से कैदियों एवं अन्य लोगों के साथ बातें करना चाहते थे। इस तरह दिन की समाप्ति चथम आरा मिल देखने के बाद हो गई, लेकिन उसके बाद उन्होंने विचार किया कि वे माउंट हेरियेट का भ्रमण करें, जहाँ से वे दूर तक फैले जंगल और सूरज के डूबने के नजारे को देख सकें।

जल्दबाजी में पुलिस का एक गस्ती दल तैयार किया गया। वहाँ किसी प्रकार के खतरे की कोई आशंका तो थी नहीं, क्योंकि वहाँ कोई कैदी नहीं रहता था सिवा उसके (अर्ध-स्वतंत्र लोग) जिन्हें 'रहने की परमिट' दी गई थी। वहाँ घुड़सवारी के बाद वे वायसराय से मिले और उनके साथ बातचीत करने में कुछ समय बिताए, फिर वापस नीचे उतरने लगे।

नीचे उतरते वक्त अचानक से घना अंधेरा छा गया। वायसराय के दल ने रास्ते में कुछ लोगों को देखा जिसमें एक दल के लोग लेडी मायो और उनके दल के लिए कुर्सियाँ ले जा रहे थे जिसका उपयोग अगले दिन सुबह होना था। जैसे ही उन लोगों ने टॉर्च की रोशनी को उस तरफ घुमाया और गौर से देखा तो पाया कि एक व्यक्ति घने अंधेरे से तेजी से निकला और लॉर्ड मायो की तरफ कूदा और उनके साथ धक्का-मुक्की करने लगा। इस गड़बड़ झाले में टॉर्च को नीचे फेंक दिया गया और रोशनी बुझ गई, वहाँ असमंजस की स्थिति हो गई और चीखने-चिल्लाने की आवाजें और भी तेज हो गई। इस दौरान लॉर्ड मायो पर एक तेज धारदार रसोई बनाने में काम आने वाली छूरी से वार हुआ और उन्हें दो घातक घाव लगे। इस हाथापाई में वे या तो वहाँ से नीचे कूद गए या फिर छिछले पानी में गिर गए। पर उन्होंने जल्दबाजी में सिर्फ इतना कहा कि मेरे ऊपर हमला हो गया है। सुरक्षाकर्मियों ने हमलावर को घेरकर पकड़ लिया गया। उस समय जख्मी वायसराय को उपचार के लिए समुद्री जहाज पर लाया गया, वे बेहोश थे और थोड़ी ही देर में मर गए।

लॉर्ड मायो की हत्या के संदर्भ में दो बातें कही जाती है। एक लेडी मायो की साहस और कार्य क्षमता। वह अपने घर से मीलों दूर थी और यह घटना अचानक से हुई जो

डरा देने वाली थी। लेकिन वह शांति के मार्ग से नहीं भटकी। उसने कार्यभार संभाला और असहनीय दुखद सूचना मातृभूमि इंग्लैंड भेजा ताकि लाश को वहाँ भेजा जा सके। दूसरी बात थी शेर अली का वक्तव्य जो उन्होंने सुनवाई के दौरान दी थी, वह यह कि 'यदि कोई यूरोपियन अधिकारी इसे अपने नजरिए से देखेगा तो निश्चय ही उन पर आक्रमण हुआ है और वह दोषी है, लेकिन इसी बात को जब एक भारतीय के नजरिए से कोई देखेगा तो यही कहेगा कि ऐसा नहीं हुआ है। यहाँ आप किस नजरिए से इसे देखना चाहेंगे?'

दो महत्त्वपूर्ण घटना के बाद रोस की चकाचौंध अचानक से गायब हो गई। इसमें पहला था 26 जून 1941 को आया दिल दहला देने वाला भूकंप जिसने अंडमान और निकोबार द्वीप समूह में आपदा की स्थिति ला खड़ी की। सेल्युलर जेल का केंद्रीय टावर गिर गया जिसके चलते एक वार्डन की दबकर मौत हो गई और अनेकों घायल हो गए। रोस में इमारतें गिर गई और कैदियों को टूटे एवं क्षतिग्रस्त हुए भवनों का मरम्मत होने तक वाइपर द्वीप पर रखा गया। उसी समय 1942 ई. में जापान की सेना ने पूरे दक्षिण-पूर्व एशिया को जीतने का अभियान चला रखी थी, उसने शोनान (सिंगापुर) को

जीत लिया, जनवरी 1942 ई. में उसने रंगून पर भी अधिकार कर लिया और अब वे बंगाल की खाड़ी की तरफ बढ़ रहे थे। यह भारत में अंग्रेज सरकार के लिए बहुत बड़ी ख़बर थी, क्योंकि अब वे बहुत जल्द अंडमान द्वीप तक पहुँचने वाले थे। ऐसे में सुरक्षा व्यवस्था करना एक असंभव काम था, क्योंकि उनके पास सिवा यहाँ के जेल में निगरानी करने वाले चंद सुरक्षा कर्मियों एवं सेना के थोड़े से जवानों के।

अब अंग्रेज सरकार का दिल तेजी से धड़कने लगा और आनन फानन में उसने अपने अधिकारियों को वापस बुला लिया जबकि कैदियों को उनके अपने भाग्य के भड़ोसे छोड़ दिया। युद्ध टालने के उद्देश्य से एक छोटे से गोरखा रेजिमेंट के जवानों को कलकत्ता से वहाँ भेजा गया। इस बीच 23 मार्च 1942 को जापानी सेना ने कारबीन कॉव एवं अन्य समुद्र तट पर अपना पाँव रखा और इस द्वीप पर बिना एक भी चक्र गोली चलाए अपना आधिपत्य कायम कर लिया। यह युद्ध के इतिहास की सबसे आसान जीत थी। अगले साढ़े तीन साल तक इस द्वीप की जिंदगी नरक से भी बदतर हो गई। वे लोग जिन्होंने इस दौर को देखा है और आज तक जिंदा हैं वे अराजकता के इस दौर की कहानी को याद करते हुए कहते हैं, युद्ध के इस दौर में एक तरफ जहाँ भयंकर क्रूरता देखा गया तो वहीं दूसरी तरफ जबरदस्त हिम्मत और साहस का भी परिचय मिला, यानि दोनों ओर से अतिवादी छोड़ पर लोगों को देखा गया।

टॉप्सी टर्वी

मैं वर्तमान से कुछ पीछे जाकर टॉप्सी नाम की उस अंडमानी औरत के बारे में बातें करना चाहता हूँ जो दण्ड विषयक औपनिवेशिक दल का हिस्सा थी। उसने जारवा और अंडमानी जनजातियों के समूहों से संपर्क किया। और उन्हें जापानी आधिपत्य से पहले ब्रिटिश सरकार द्वारा दोषी ठहराए गए लोगों को कॉलोनी में अपने साथ आने को राजी किया।

मेरे हिसाब से टॉप्सी अंडमान और निकोबार के स्थानीय लोगों के साथ हुए अन्याय का प्रतीक है। वह अगवा की गई, पालतू बनाई गई, उपहास का पात्र बनाई गई, इतना ही नहीं उसका इस्तेमाल और शोषण भी किया गया। अंग्रेजों का मानना था कि वे उसे जंगल से अलग कर, अच्छे घर में रख कर उसके साथ अच्छा कर रहे हैं। उन अधिकारियों का मानना था कि उसे खुश और उनके प्रति एहसानमंद होना चाहिए। हालाँकि जब वह बुरी तरह से परेशान होकर अंग्रेजों के चंगुल से भागने की कोशिश की तो वह रॉस और अबेरदीन द्वीप के बीच नहर में डूबकर मर गई।

टॉप्सी जंबो की पत्नी थी। अंडमान के निवासियों को सामान्यतः ऐसे नाम दिए जाते थे क्योंकि अंग्रेज इनके असली नामों का उच्चारण सही तरीके से नहीं कर पाते थे। वे उन्हें इन पालतुनुमा नामों से पुकार कर उनकी खिल्ली उड़ाया करते थे जैसे—क्वीन विक्टोरिया, स्नोबॉल, जूनो। प्रेट नाम के नौसैनिक गार्ड की हत्या के आरोप में जंबो को गिरफ्तार किया गया और उसे सात महीने की सजा सुनाई गई। अंडमान के लोगों में जंबो एक महत्त्वपूर्ण व्यक्ति था। उसकी गिरफ्तारी से आदिवासियों में गम और गुस्सा फैल गया। बाद में पता चला कि प्रेट ने जंबो की पत्नी टॉप्सी के साथ छेड़छाड़ की थी

और जंबो ने बदला लेने के लिए उस पर हमला किया था। उसे छोड़ दिया गया, लेकिन इससे पहले उन दोषी गार्ड और अधिकारियों द्वारा बुरी तरह मारा-पीटा और प्रताड़ित किया गया।

अंग्रेजों और आम हिंदुस्तानियों के लिए अंडमान और निकोबार के स्थानीय लोग कौतूहल और रूचिकर मानव प्रजाति के जीव थे। उनके सिर, हाथ-पैर और शरीर के अन्य हिस्सों की पैमाइश की जाती थी; इतना ही नहीं, उनके बालों को सुरक्षित रखा गया। इन्हें प्राचीन प्रजाति के आदिवासी के रूप में प्रदर्शित करने के लिए कलकत्ता, मद्रास (चेन्नई) तथा न्यूजीलैंड जैसे दूर-दराज इलाकों तक ले जाया गया। अब आप ही अनुमान लगाएँ कि जब अंडमान और निकोबार के शांत जंगलों से इन्हें शोरगुल और भीड़भाड़ वाले शहरों में ले जाया जाता होगा तो इन्हें कैसा लगता होगा।

ऐसी ही एक घटना सन् 1885 में हुई थी जब अंडमान के तेरह लोगों को मलेशिया के पेनांग ले जाया गया। वहाँ की गलियों में इन्हें 'हन्डुमानी', कह कर और चीख-चिल्ला कर इनका स्वागत किया गया। इतना ही नहीं लोग इन पर हँसते थे, सामान फेंका करते और थूकते भी थे। इस प्रजाति के लोग वहाँ अधिक दिनों तक जिंदा नहीं रह पाए। इनका शरीर और दिमाग इस तरह के दबाव को झेल नहीं पाया। बाकी वहाँ की सर्दी और बीमारी से मर गए। जब भी बड़े सरकारी अधिकारी या वायसराय जैसे अति महत्त्वपूर्ण लोग घूमने अंडमान जाया करते थे तो कुछ दोस्ताना संबंध वाले अंडमान के आदिवासियों को उनके मनोरंजन के लिए बुला लिया जाता था। वहाँ उन पर चर्चा होती, उनका परीक्षण किया जाता तथा उन्हें नाचने और गाने के लिए मजबूर किया जाता था। उस समय उपनिवेश के कुछ ब्रितानी और हिंदुस्तानी गैर जिम्मेदार लोग उन्हें सताया करते थे। शरारत के तौर पर उनके डेरों को लूट लेते थे तथा उनके तीर-धनुष और अन्य कीमती सामान लूट लिया करते थे। इसमें कोई आश्चर्य नहीं कि इन लोगों ने भी उनके ठिकानों को लूटना शुरू कर दिया लेकिन आदिवासियों के इस काम को मजाक या शरारत नहीं बल्कि अपराध माना गया।

ऐसी क्रूरता यहाँ के आदिवासियों के साथ आज भी जारी है। ऐसा सिर्फ अंडमान और निकोबार द्वीप पर ही नहीं बल्कि पूरे देश व विश्व में होता रहा है। 'आदिवासी', जैसा कि उन्हें कहा ही जाता है, को अक्सर विशिष्ट अतिथियों के लिए मनोरंजन करने को कहा जाता है। इस द्वीप पर आने वाले कई लोग आदिवासियों के इलाके में घूमना चाहते हैं। यह बात समझ में भी आती है कि ऐसे लोगों को देखना जो बाहरी दुनिया के संपर्क में नहीं हैं, उनके लिए मजेदार है। लेकिन इस दौरान इस अलग-थलग पड़े मानव प्रजाति को भयंकर हानि पहुँचाना कहाँ तक जायज है? उदाहरण के लिए अपना प्यार और सद्भावना दिखाने के लिए यदि हम किसी जारवा जाति के बच्चे को गले लगाना, उन्हें चूमना या कुछ उपहार देना चाहते हैं तो संभव है कि हमारे संपर्क से उनके शरीर में ऐसे किटाणु प्रवेश कर जाए जो उनकी मौत का कारण बन जाए। हमारे आपके अंदर ऐसी प्रतिरक्षक क्षमता है जो फ्लू जैसी बीमारियों से लड़कर उन्हें दूर कर देती है। जरा-सी बीमारी, खाँसी, या छींक होने पर हमें अपने स्कूलों और दफ्तरों से एक-दो दिन की छुट्टी लेनी पड़ती है। इसके बाद हम जल्द ही ठीक और तंदुरूस्त हो जाते हैं और अन्य बीमारियों से लड़ने के लिए हमारे अंदर नई शक्ति आ जाती है।

लेकिन जारवा, ओंग व सेंटीनलीज आदिवासियों के लिए ऐसा नहीं है। हमारी साधारण व हानिकारक बीमारियाँ भी उनके लिए एड्स की तरह खतरनाक साबित होती है और उनके लिए जानलेवा है। अगर मैं किसी जारवा जाती के बच्चे को गले लगाता हूँ तो हो सकता है वह कुछ दिनों बाद मर जाए। सन् 1900 से 1970 तक के इन 70 सालों में अंडमान के निवासियों की जनसंख्या तीन से चार हजार से घटकर महज 40 रह गई है। यह दुखद घटना कैसे घटी? ऐसा किसी गलत इरादे के कारण नहीं बल्कि जानकारी की कमी, अज्ञानता और जागरूकता की कमी खुद को उनसे बेहतर मानने के कारण हुआ। हम में ऐसी भावनाएँ आज भी हैं कि हमें यहाँ के स्थानीय निवासियों को 'सभ्य' बनाना चाहिए। और तो और हम इन्हें भी अपनी तरह आधुनिक जिंदगी देना चाहते हैं। हालाँकि कुछ लोग ऐसे भी हैं जो सोचते हैं इन स्थानीय आदिवासियों को अपनी मूल्यवान संस्कृति के साथ जिंदगी जीने के लिए अकेले छोड़ देना चाहिए। इसके बारे में आप का क्या खयाल है?

अंडमान के आदिवासियों की कम होती जनसंख्या हमारे लिए कई महत्त्वपूर्ण सबक की तरह है। हमें इस पर ईमानदारी से ध्यान देने की जरूरत है। सन् 1858 से 1941 के बीच 90 वर्षों में पोर्ट-ब्लेयर की भूमि-व्यवस्था से लेकर जापानी आधिपत्य के दौरान ऐसी कई गलतियाँ की गई जिसका अंडमान के आदिवासियों पर घातक असर पड़ा। स्ट्रेट द्वीप पर बचे-खुचे अंडमान के आदिवासियों की मौत इस पूरे आदिवासी प्रजाति का अंत बनकर सामने आएगी। इसका अर्थ यह है कि महज डेढ़ सौ वर्षों में 'आधुनिक मनुष्यों' ने एक स्वस्थ, ओजस्वी और आश्वस्त समाज को लगभग पूरी तरह से नष्ट कर दिया। इसके लिए सबसे बड़ा हत्यारा साबित हुआ 1970 में स्थापित आश्रय स्थल जिसे हास्यास्पद तौर पर 'अंडमान गृह' नाम दिया गया। इस 'आश्रय स्थल' में ये आदिवासी मक्खियों की तरह मारे गए थे। समझ में नहीं आता यह आश्रय स्थल बनाया ही क्यों गया था।

ब्रितानी व्यवस्था के तहत रहने वाले लोगों में हमेशा ऐसी भावना थी कि शिकार पर जीने वाले भूखे और भुखमरी में हैं क्योंकि वे अपना अधिकांश समय खाना ढूँढ़ने में ही बिता देते हैं। 'अंडमान गृह' बनाने के पीछे एक कारण यह भी था। दूसरा कारण हमारा यह दृढ़ विश्वास था कि आधुनिक मनुष्य ही सर्वोपरि है। और हमें धरती पर ईश्वर ने इन शिकारी व देशज लोगों की सहायता के लिए भेजा है। यह आश्रय इन्हीं लोगों के लिए बना था और वे जब तक चाहते वहाँ रह सकते थे। आश्रय स्थल के पीछे यही मूल विचार था और बाद में ऐसा समय भी आया जब यहाँ अंडमान के निवासियों को बाँधकर रखा गया और उन पर पहरा बैठा दिया गया ताकि वे भाग न जाएँ। दुर्भाग्यवश, इतिहास ने कुछ ऐसे समय देखे हैं जब अंडमान के आदिवासियों और यहाँ लाए गए कैदियों के बीच कोई फर्क नहीं था। उन्हें भोजन, तंबाकू, कपड़े और शिक्षा दी जाती थी। अब हम इन चारों पर बारी-बारी से नजर डालते हैं—पौष्टिक और रेशेदार जंगली भोजन छोड़ चावल और दाल जैसे प्रतिकूल भोजन के कारण उनका पाचन तंत्र खराब हो गया। क्या आपका शरीर आपके आहार में जरा भी बदलाव बर्दाश्त करेगा? यदि आपको अचानक
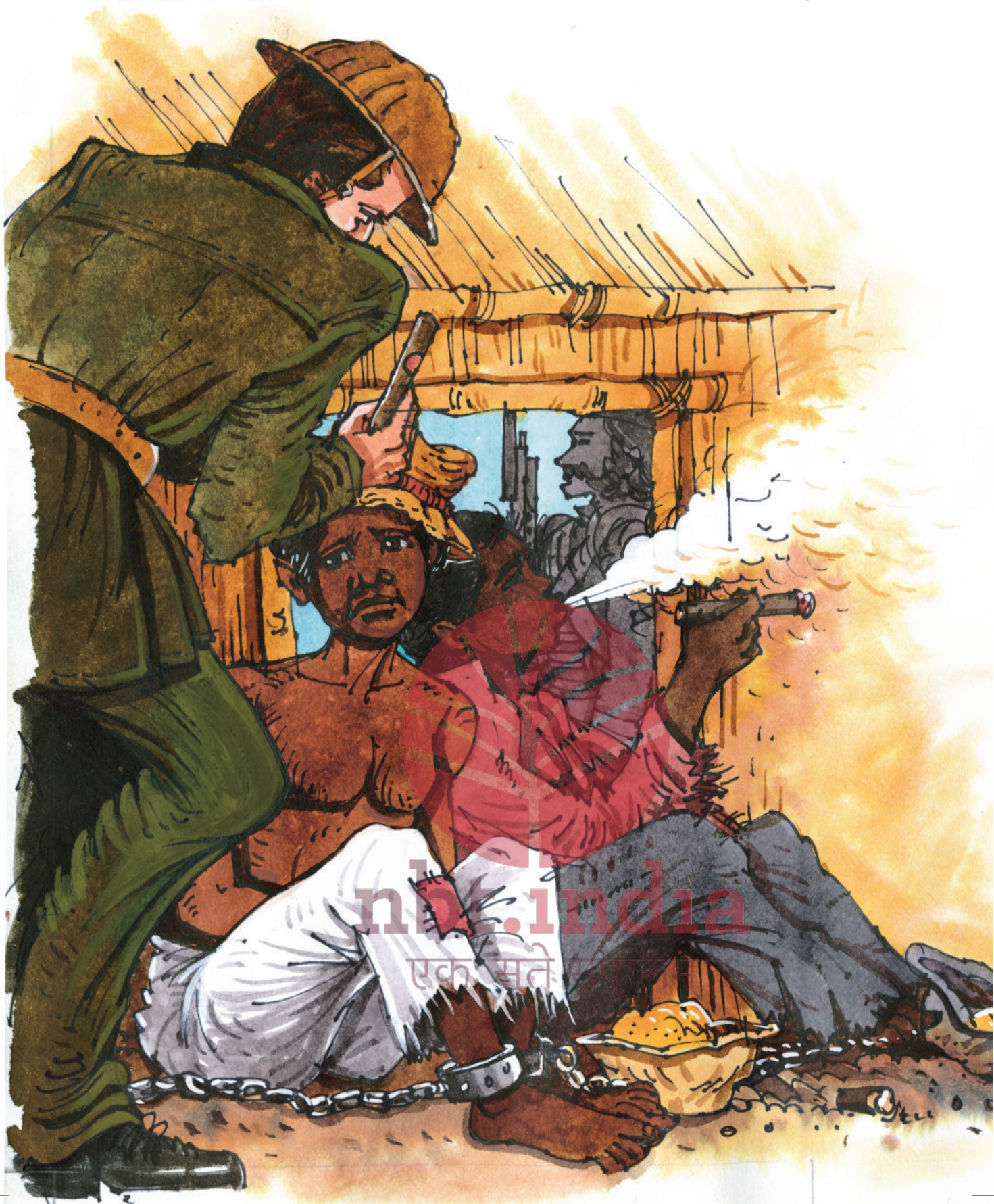
अपने खान-पान में बदलाव करना पड़े और आपको रोज खाने में चूहे और समुद्री शैवाल दिया जाए तो यह आपका पेट बर्दाश्त कर पाएगा?

उन्हें तंबाकू क्यों दिया जाता था, इस पर तो चर्चा करने की भी जरूरत नहीं है। हम सब जानते हैं कि यह कितना हानिकारक होता है। 'नंगे जंगलियों' को कपड़े पहनाना उच्चतम प्राथमिकता थी। अंग्रेजों के बाद भारतीयों को भी ऐसा लगा कि कपड़े पहनना सभ्य मनुष्य के लिए आवश्यक है। आज जारवा जाति के अधिकांश लोग कपड़े पहनते हैं। बीते दिनों में अंडमान के निवासी उन्हें दिए गए पुराने कपड़ों और चिथड़ों से अपना शरीर ढकते थे। संभवतः ऐसा अंग्रेज महिलाओं को वे नंगे न दिखें इसलिए किया जाता रहा होगा। हम भारतीय भी अंग्रेजों से कम नहीं हैं, हम भी यही सोच रखते हैं कि सबको कपड़े जरूर पहनने चाहिए। लेकिन रोचक बात यह है कि कपड़े पहनने के कारण उन्हें फुफ्फुसीय और श्वसन संबंधी बीमारीयाँ जैसे—निमोनिया और तपेदिक (टीबी) भी हुई होगी। हो सकता है ऐसा इसलिए हुआ होगा, क्योंकि उन्होंने ठंडी हवाओं से बचाने वाली पारंपरिक और प्रभावशाली गीली मिट्टी का लेप अपने शरीर पर लगाना छोड़ दिया।

शिक्षा के नाम पर अंडमान के निवासियों को बेंत से सामान बनाने और चाकू-काँटे से खाना खाने और अच्छे कपड़े पहनने जैसी अंग्रेजी रहन-सहन की शिक्षा दी गई। उन्हें अंग्रेजी सिखाने की भी कोशिश की गई। जाहिर सी बात है कि बच्चे इन सब चीजों में कोई खास रूचि नहीं लेते थे क्योंकि यह सब उनकी अपनी जिंदगी का हिस्सा नहीं था। वे इन सब चीजों से भागा करते थे या बीमार पड़ने व सोने का नाटक किया करते थे। हमने उन्हें अपनी भाषा सिखाने के बजाय उनकी भाषा सीखने की कोशिश क्यों नहीं की? अंडमान और निकोबार के आदिवासियों से तकरीबन डेढ़ सौ साल से संपर्क में रहने के बावजूद कोई अंग्रेज या भारतीय व्यक्ति उनकी भाषा क्यों नहीं बोल पाया? इसके नाम पर हमारे पास सिर्फ कुछ जारवा, ओंग और अंडमानी शब्दों की सूची है। हमारी उपेक्षा के कारण अंडमान में बोली जाने वाली 12 भाषाएँ विलुप्त हो चुकी हैं। क्योंकि यहाँ हर *गोत्र* का अपना व्याकरण और शब्द भंडार है। यह पूरे विश्व के लिए कितना बड़ा नुकसान है? उनके पास हमें बताने के लिए कितना कुछ था अगर हमने खुद बोलने

के बजाय उन्हें सुना होता। उदाहरण के तौर पर अंडमानियों और ओंग लोगों ने उन बड़े जानवरों को भी नाम दिया था जिसे उन्होंने कभी देखा नहीं था। इससे लोग यह सोचने लगे कि शायद किसी समय अंडमान के लोग बर्मा या मलेशिया या फिर दोनों देशों के निवासियों का हिस्सा तो नहीं थे।

किसी ने अंडमान के निवासियों की भाषा या संस्कृति का कभी गहराई से अध्ययन नहीं किया जिसके कारण उनके प्रति ढेरों गलतफहमियाँ समाज में फैली थीं। इसका एक छोटा सा उदाहरण है एक सरकारी रिपोर्ट जिसमें कहा गया है कि अंडमान के निवासी कभी खुश नहीं दिखते और वे जोर-जोर से रोया करते हैं। जबकि हकीकत यह है कि जब वे एक-दूसरे का स्वागत करते हैं तो रोते हैं। यानी उनके आँसू दुःख के नहीं बल्कि खुशी के होते हैं।

अंडमान गृह को लेकर एक और समस्या थी। इस आवास की देखरेख का जिम्मा वहाँ भेजे गए कैदियों को दिया गया था। वे अंडमान के निवासियों के साथ बड़ी बेरहमी से पेश आते थे। अंडमान के लोगों के विचार से यह निवास स्थान नहीं बल्कि जेल था जिसमें किसी भी तरह की आजादी नहीं थी। वे मौका मिलते ही वहाँ से भाग जाया करते थे। इस प्रकार औपनिवेशिक लोगों के संपर्क से पूरी जनजातियों में संक्रामक किटाणुओं का फैलना शुरू हुआ। खसरा और अन्य संक्रामक बीमारियों से हर साल सैकड़ों स्थानीय लोगों की मौत होने लगी। एक बार तो इस अंडमान गृह में इतने आदिवासियों की मौत हुई कि उन्हें दफनाना मुश्किल हो गया।

इतिहास से हमें बहुत शिक्षा मिलती है। लेकिन इतिहास हमें तब सिखा सकती है जब हम सीखने के लिए तैयार हों। हमें इस पर गंभीरता से विचार करना चाहिए कि अंडमान के निवासियों के इतिहास से हमें क्या सीख लेनी चाहिए। हमने कहाँ गलती कर दी? हम से मेरा मतलब है अंग्रेज और आजादी के बाद की भारत सरकार, मानवविज्ञानी व अन्य अधिकारी। मैं स्वतंत्र भारत के सभी लोगों को भी इसमें शामिल करूँगा क्योंकि हमारी देशज संस्कृति को बचाने की हमारी भी जिम्मेदारी बनती है। ये देशज लोग भी हमारे साथी हैं और वे तभी आगे की ओर विकास कर सकते हैं जब हम उनकी जरूरतों के बारे में पूरी संवेदनशीलता और जिम्मेदारी के साथ ख्याल रखें।

तो, हमारी गलतियाँ क्या थीं? इसके बारे में मैं आपको अपने विचार बताता हूँ और आप यह फैसला कीजिए कि आप मुझसे राजी हैं कि नहीं। निश्चित तौर पर हमारी सबसे बड़ी और पहली गलती थी अंडमान की संस्कृति और जीवनशैली का अनादर करना। इसका मतलब है कि हमने उन्हें महत्व नहीं दिया और उन्हें गिरा हुआ और छोटा समझा। हमारे मन में हमेशा ऐसी भावना थी कि हमें उनकी जीवन शैली में सुधार लाना चाहिए क्योंकि वे उस तरह से नहीं जी रहे थे जैसा हम चाहते थे। हमने उन्हें अपनी तरह जीने को मजबूर किया। यह करने के बजाय हमें उनसे कुछ सीखना हमारे लिए अधिक महत्त्वपूर्ण होता। अगर हमने ऐसा किया होता तो आज हम लालची, हिंसात्मक और लड़ाकू होने के बजाय शांत, खुश और प्रकृति को प्यार करने वाले होते।

हमारी दूसरी बड़ी गलती थी उन्हें वन से बाहर निकाल कर अपनी बीमारियों के संपर्क में लाना। हमारे किटाणुओं और संक्रमण से पूरे विश्व में आदिवासियों की मौत होती रही है और आज भी मर रहे हैं। हमने अपनी बीमारियों तथा उनकी प्रतिरोधक क्षमता में कमी की चर्चा पहले भी की है। वह आग के समान तेजी से फैल सकती है और इसका परिणाम भी भयानक हो सकता है। सन् 1867 में खसरा का प्रकोप 'अंडमान गृह' में फैला था। इसके बाद बीमार और प्रभावित लोग वनों में भाग गए थे। आदिवासियों का पूरा *गोत्र* इससे बुरी तरह प्रभावित हुआ और सैकड़ों की जानें गई थी। हालाँकि निकोबारियों पर इसका प्रभाव नहीं पड़ा क्योंकि सदियों से बाहरी लोगों के संपर्क में रहने के कारण संभवतः उनके शरीर की प्रतिरोधक क्षमता मजबूत हो गई थी।

तीसरी गलती बाकी सभी गलतियों से बड़ी थी। यह अनर्थपूर्ण और हिंसात्मक काम था जिसमें लोगों को गोली मार दी जाती थी या खड़े चट्टान के ऊपर से धकेल दिया जाता था। तंबाकू और अन्य मादक पदार्थ जो आधुनिक जीवन के जहर के समान हैं, उन्हें तोहफे के रूप में दिए जाते थे। यह उन्हें जारवा की बस्तियों पर हमले करने और भागे हुए कैदियों को पकड़ने पर ईनाम में दिए जाते थे।

इस दौरान आखिर जारवा जाति के लोग क्या कर रहे थे? वे इन घटनाक्रमों को बड़ी सतर्कता से देख रहे थे। उन्होंने यह भी देखा कि अंडमान के निवासियों के साथ क्या-क्या हो रहा है। उन्होंने भय तथा आश्चर्य के साथ यह जरूर महसूस किया होगा कि गोरे और साँवले लोगों से संपर्क और दोस्ती से अंडमान के लोगों को समस्याओं के सिवा कुछ हासिल नहीं हुआ।

जारवा जाति के लोगों ने बड़ी चतुराई से इन सब चीजों से दूरी बनाए रखने का फैसला किया। लेकिन जब घुसपैठियों और शिकारी चोरों द्वारा उनकी भूमि पर अतिक्रमण किया जाने लगा तब उन्होंने लड़ाई की। ब्रिटिश सरकार ने ''फूट डालो और राज करो'' की नीति अपनाई। इसके तहत उन्होंने अन्य स्थानीय आदिवासियों को जारवा लोगों पर हमले करने के लिए उकसाया ताकि उन्हें अंग्रेजों के कब्जे वाले क्षेत्र से खदेड़ा जा सके। पुराने दस्तावेजों में इसका स्पष्ट उल्लेख है कि अंडमान के निवासियों को जारवा लोगों पर हमले करने को उकसाने के लिए किस तरह पुरस्कार दिया जाता था। जारवा जो कि अपने जंगली निवास स्थान और अपने लोगों को बचाने के प्रति दृढ़ प्रतिज्ञ थे, प्रतिक्रिया स्वरूप औपनिवेशिक शक्तियों पर हमला करते थे। बाद में उन्होंने लोहे चुराने के लिए भी बस्तियों पर हमला करना शुरू कर दिया। लोहे का इस्तेमाल वे वाणों की नोंक तथा अन्य हथियार बनाने के लिए किया करते थे।

इस तरह के हमले या छापेमारी के बाद जारवा लोगों के खिलाफ एक ''दंडात्मक मिशन'' चलाया गया होगा। यह लड़ाई बेहद असमानता वाली रही होगी जिसमें एक तरफ तो बंदूकों और अन्य आधुनिक हथियारों से लैस अंग्रेज सेना थी तो दूसरी तरफ महज तीर-धनुष वाले जारवा। इन मुठभेड़ों के बारे में विस्तार में जाना बहुत घृणास्पद है लेकिन एक छोटा तथ्य ही हमें सारी बातें स्पष्ट रूप से समझा देता है। सन् 1925 में 30 सैनिकों द्वारा चार महीने लंबा एक अभियान चलाया गया था। जिसमें सैंतिस (37) आदिवासियों को जानवरों की तरह गोली मार दी गई। यह शायद संपूर्ण जारवा प्रजाति की जनसंख्या का छठा भाग था जो पूरे विश्व की मनुष्य प्रजाति की सबसे पवित्रतम और पुरानी जनजाति है।

आजादी के बाद

15 अगस्त 1947 को अंडमान और निकोबार द्वीप के विभिन्न भागों में एक दूसरा (और अधिक रंग-बिरंगा) झंडा फहराया गया। अंडमान और निकोबार की सारी जनता एक नए और आजाद भारत के उत्सव को देख रही थी और उसका जश्न मना रही थी। इसमें से अधिकांश पूर्व-अपराधी और उनके परिवार थे जो सरकार द्वारा दी गई जमीन पर अपनी नई जिंदगी की शुरुआत कर रहे थे। पूरे देश भर से यहाँ लाए गए इन स्वतंत्रता सेनानियों के परिवारों के नाते यह सही मायने में भारतीयों की भीड़ थी जिसमें कश्मीर से लेकर कन्याकुमारी तक के लोग थे। अंडमान और निकोबार में अगल-अलग धर्म और संस्कृतियों के लोग एक साथ शांतिपूर्वक रहते थे, यही वहाँ के लोगों की सबसे बड़ी ताकत भी थी। इसमें करेन समुदाय के लोग भी थे जिन्हें बीसवीं सदी की शुरुआत में अंडमान में बढ़ते हुए इमारती लकड़ी के उद्योग में काम करने के लिए बर्मा से लाया गया था।

शुरुआती दिनों में अंडमान की जनसंख्या में कुछ अंग्रेज और ऐंग्लो-इंडियन भी शामिल थे जो वहीं बस गए थे। उसमें से एक फ्रेड बर्न थे जो आजादी के कुछ ही दिनों बाद आए थे। वह ब्रिटिश पुलिस द्वारा स्थापित इकाई ''बुश पुलिस'' के प्रमुख थे जिसका गठन विरोध करने वाले आदिवासियों पर काबू रखने के लिए हुआ था। बाद में वह विम्को माचिस फैक्ट्री के प्रबंधक बन गए जो कि पोर्ट ब्लेयर में था। 'बर्न साहब' इन द्वीपों के एक जाने-माने हस्ती बन गए। प्रारंभिक दिनों में वह अपनी उदारता और मुस्कान से वहाँ आए हर सैलानी का अभिवादन करते थे, तब जबकि देश के इस सुदूरवर्ती हिस्से

में घूमने बहुत कम लोग आया करते थे। दूसरे थे कैप्टन डेनिस बेल, बर्मा से आए एक नाटे और हट्ठे-कट्ठे व्यक्ति। इन्होंने अंतरद्वीपीय नौ-परिवहन का व्यापार स्थापित किया जो कभी भी बहुत अच्छा नहीं चला। दरअसल, डेनिस इतने उदार व्यक्ति थे कि कभी-कभार ही अपने ग्राहकों से पैसे वसूलते या बिल भेजते थे। उस समय स्थानीय आदिवासियों को मिलाकर इस द्वीप की जनसंख्या करीब 30,000 थी। यहाँ सबके लिए प्रचुर मात्रा में खाना, पानी और जमीन उपलब्ध थी।

लेकिन ऐसी स्थिति अधिक दिनों तक नहीं चल सकी जब यहाँ बसने वालों के लिए उदार और प्रेरणादायक प्रस्ताव दिए जाने लगे तो भारत के अन्य भागों से ज्यादा से ज्यादा लोग वहाँ पहुँचने लगे। हर परिवार को घर बनाने के लिए लकड़ियाँ, धान, नारियल और फलों की खेती के लिए जमीन का विशाल हिस्सा तथा एक एकड़ का प्लॉट घर के लिए दिया गया। उन्हें कुछ वर्षों तक घर की मरम्मत और विस्तारण के लिए लकड़ियाँ भी दी जाती थी। ये सारे काम इस द्वीप पर जनसंख्या बढ़ाने के लिए किया जा रहा था। इस योजना का फायदा भी हुआ। इन द्वीपों में अचानक जनसंख्या विस्फोट हुआ जिसका दुष्प्रभाव यहाँ के वातावरण पर भी पड़ा। आज वहाँ की जनसंख्या पाँच लाख से अधिक हो गई है जिसके बोझ तले वहाँ के संसाधन कराह रहे हैं और क्रमशः क्षीण हो रहे हैं। यहाँ के 15% से अधिक कीमती वनों को काट दिया गया है और हम यह अच्छी तरह जानते हैं कि वनों को काटने का विध्वंसक प्रभाव जल संकट तथा यहाँ तक कि वर्षा में कमी के रूप में पड़ता है। अंडमान और निकोबार के तकरीबन चालीस द्वीपों पर जल संकट होने के बावजूद लोग विकास के पीछे भागे जा रहे हैं। अब यहाँ देश के अन्य भागों से लोगों के आगमन को रोकने और संसाधनों को बचाकर रखने का समय है।

स्वतंत्रता प्राप्ति के नौ साल बाद सन् 1956 में भारत सरकार ने यहाँ एक खास कानून लागू किया जिसका नाम था–अंडमान और निकोबार की जनजातिय आदिवासियों की सुरक्षा कानून (ए.एन.पी.ए.टी.आर.)। इस कानून के अनुसार पारंपरिक आदिवासियों की भूमि का मानचित्र बनाकर उसकी रक्षा की जाती और उन्हें आरक्षित भी की जाती। इस प्रकार बाहरी लोग इस जमीन का न तो उपयोग कर सकते न ही उस पर कब्जा जमा सकते।

अंडमान के मध्य और दक्षिण-पश्चिमी तट के लगभग 700 वर्ग किलो मीटर के हिस्से को जारवा आरक्षित क्षेत्र बनाया गया। उत्तरी सेनटीनल द्वीप (50 वर्ग किलोमीटर) तथा छोटे अंडमान द्वीप (520 वर्ग किलोमीटर) को भी सेनटाइनलिस और ओंग जनजातियों के लिए आरक्षित किया गया। अंडमानी जनजाति को स्ट्रेट द्वीप तथा शोमपेन को ग्रेट निकोबार द्वीप पर जमीन दी गई। पूरा निकोबार द्वीप निकोबारी जनजातियों के लिए आरक्षित किया गया। यह एक लाजवाब निर्णय था जिसने साबित कर दिया कि आजाद भारत अपने नागरिकों के अलग-अलग संस्कृतियों का समान आदर करता है। यह उनकी जरूरतों का ख्याल रखते हैं तथा अनपढ़ और असहाय लोगों के साथ न तो दुर्व्यवहार करता है न ही शोषण। इस कानून (अंडमान और निकोबार के जनजातिय आदिवासियों की सुरक्षा कानून) ने यह भी माना कि जारवा, ओंग और शोमपेन जैसी जंगलों में निवास करनेवाली शिकारियों के दलों को जीवित रहने के लिए निश्चित ही शांत जंगलों जैसा निवास स्थान चाहिए।

आज इन जनजातियों की स्थिति बहुत अनिश्चितता वाली है। निकोबारियों को छोड़कर यहाँ की सभी जनजातियों की जनसंख्या में लगातार गिरावट आ रही है। आजादी के बाद ओंग जनजाति की जनसंख्या आधी हो गई है। शून्य जन्मदर के साथ ओंग आदिवासियों की जनसंख्या सौ (100) से भी कम रह गई है। शोमपेन भी जनसंख्या में गिरावट के कारण कम होते जा रहे हैं और जारवा की जनसंख्या महज दो सौ (200) या उससे भी कम रह गई है। आप शायद ही जानते होंगे कि स्ट्रेट द्वीप पर अंडमानी आदिवासियों के अंतिम तीस (30)

लोग बीमार और दुखद जीवन व्यतीत कर रहे हैं। बाकी अन्य प्रायोगिक उद्देश्यों के लिए अंडमानी जनजाति के लोग समाप्त हो चुके हैं।

अब कितने सेनटाइनलिस जीवित बचे हैं यह कोई नहीं जानता। उस द्वीप पर जाना इतना दुष्कर है कि हमें यह भी अंदाजा नहीं है कि उस द्वीप पर कौन आता-जाता है या वहाँ पर क्या हो रहा है। कुछ मानव विज्ञानियों ने आशंका जताई है कि अंतरराष्ट्रीय मछुआरों ने बहुत पहले ही सेनटाइनलिस जनजाति के लोगों की हत्या कर दी होगी। हालाँकि इसकी पुष्टि के हमारे पास कोई साधन नहीं है। हम सिर्फ ऐसी आशा कर सकते हैं कि सेनटाइनलिस आदिवासी अभी भी जिंदा हैं और ठीक-ठाक से हैं। मगर ऐसा नहीं भी हो सकता है।

यहाँ की ओंग जनजाति के लोगों को मत्स्य पालन विभाग के कर्मचारियों ने आधुनिक मछली मारने वाली लग्गी और धागे से किस प्रकार मछली मारना सिखाया इसकी बड़ी दुखद और हास्यास्पद कहानी है। यह कहानी उतनी ही बेतुकी भी है! हालाँकि इन 'गुरूओं' को जल्द ही पता चल गया कि उनके 'शिष्य' उनसे कहीं ज्यादा जानते हैं और उन्होंने अपना बेवकूफी भरा प्रयास छोड़ दिया। इतनी प्राचीन प्रजातियों के लोगों के साथ इस द्वीप पर रहने को गर्व की बात समझने के बजाय बाहर से आकर बसने वाले लोग इसे शर्म की बात मानते थे। आप जैसे बच्चों को अपने आस-पास के वयस्कों को जरूर यह बताना चाहिए कि ये स्थानीय जनजातिय लोग कितने व्यवहार कुशल सह-नागरिक होते हैं। जंगल और उसके संसाधनों के बारे में उनकी जानकारी का पूरे विश्व में उपयोग किया जाता है। हम कई ऐसी दवाएँ उपयोग में लाते हैं जो पौधों से हासिल एंजाइम्स से बनती हैं तथा इसकी खोज इन आदिवासियों ने ही की है। इनके सूचना तंत्र का दवा बनाने वाली कंपनियों द्वारा कई बार दुरूपयोग भी किया गया है। मलेरिया की दवा के रूप में ओंग जनजाति द्वारा उपयोग में लाए जाने वाली जड़ी-बूटियों की जानकारी का ऐसे ही बौद्धिक अपहरण कर लिया गया। जनजातियों की इस तरह की जानकारी तथा उनकी बौद्धिक संपत्ती की सुरक्षा पूरे विश्व भर में एक प्रमुख मसला बनता जा रहा है।

यह भी उतना ही महत्त्वपूर्ण है जितना कि हम उन्हें परेशान न करें। जनसंख्या बढ़ने के कारण हम लोग जमीन के लिए अधिक लोभ करने लगे हैं, ऐसे में अपनी जमीन से बेदखल होने की आदिवासियों की समस्या विश्वव्यापी बनती जा रही है। जब हम वृक्षारोपण, सड़कें बनाने और अन्य उद्देश्यों के लिए इन आदिवासियों की जमीन ले लेते हैं तो यह उनके लिए विनाश की सूचना होती है। मेज पर बैठकर नक्शे को देखते हुए यह कहना बहुत आसान है कि इनके पास बहुत सारी जमीन हैं और हम जरूर इस टुकड़े को ले सकते हैं, लेकिन तथ्य यह है कि शिकार पर आधारित इन आदिवासियों के लिए प्रति व्यक्ति जंगल का एक निश्चित अनुपात बहुत जरूरी है।

ये आदिवासी कुछ विशेष क्षेत्र की भूमि पर विशेष और महत्त्वपूर्ण कारणों से रहना पसंद करते हैं। उदाहरण के लिए जब अंडमानियों को पूर्व कैदियों की बस्ती द्वारा दक्षिणी अंडमान से बाहर निकाल दिया गया तो उन्हें विशेष प्रकार की मिट्टी मिलनी बंद हो गई जिससे वे बर्तन बनाया करते थे। इसी तरह जारवा जाति को भी मध्य और दक्षिणी अंडमान के पश्चिमी हिस्से में धकेल दिया गया जिससे वे स्वच्छ जल वाले महत्त्वपूर्ण क्षेत्र से दूर हो गए।

अठारहवीं सदी की शुरुआत तक ये आदिवासी ही अंडमान और निकोबार के एकमात्र निवासी और मालिक थे। इसके बाद इनकी मुख्य जमीन औपनिवेशिक शक्तियों की बस्तियों तथा बाद में आजाद भारत की जरूरतों को पूरी करने के लिए ले ली गई। इसके बाद भी यदि हम अपनी सीमाओं में रहते तथा उसका आदर करते तो यह स्वीकार्य था। लेकिन ऐसा हुआ नहीं, और स्थानीय लोगों को दी गई आरक्षित जमीन धीरे-धीरे सकुंचित होने लगी। 340 किलोमीटर का अंडमान ट्रंक रोड जो दिगलीपुर को पोर्ट-ब्लेयर से जोड़ता है, का निर्माण 1971 में शुरू हुआ था। यह सड़क जारवा आरक्षित क्षेत्र से होकर गुजरती है तथा पूर्वी सीमा का निर्माण करती है। जरा सोचिए, इस सड़क निर्माण के दौरान बड़ी संख्या में पेड़ों का काटा जाना, बंदूकों और लाठियों से लैस सिपाहियों द्वारा अपने ही निवास स्थान से इन्हें खदेड़ा जाना तथा सड़क बनने के बाद ट्रकों और लॉरियों के शोर का इन जारवा लोगों पर कितना घातक प्रभाव पड़ा होगा।

औपनिवेशिक बस्तियों से जारवा लोगों के मिलने-जुलने का इतिहास बहुत सरल नहीं है। हालाँकि उनके आरक्षित क्षेत्रों में प्रवेश करना गैर-कानूनी है लेकिन इसके बावजूद शिकार-चोर यहाँ सूअर, कबूतरों, मछलियों, कछुओं व अन्य पशुओं का शिकार करने के लिए चुपके से घुस जाया करते थे। इन शिकार-चोरों से झड़प में बहुत से जारवा घायल हुए तथा मारे भी गए। मरने वालों की संख्या सैकड़ों में है। लेकिन इसके बावजूद वे तभी तक सुरक्षित हैं जब तक कि 'आक्रामक' हैं। उन्होंने बाहरी लोगों से मेलजोल नहीं बढ़ाने का फैसला किया हुआ है।

इसके बाद 1970 के दशक की शुरुआत में इनके लिए 'तोहफे फेंकने' की प्रथा की शुरुआत हुई। सरकारी महकमे के लोग नावों से जारवा क्षेत्रों में जाकर प्लास्टिक की बाल्टियाँ, लाल रंग के कपड़े तथा वैसी चीजें जिसे हम आसान जीवन-जीने के लिए जरूरी मानते हैं, फेंकने लगे। पहले तो जारवा लोगों ने इन सब चीजों पर अधिक ध्यान नहीं दिया। फिर एक दल ने इन उपहारों को स्वीकार करने तथा उनसे घुलने-मिलने लगे। जल्द ही दूसरे भी उसके साथ हो लिए। वे नावों से आया करते थे और अपनी मरजी की वस्तुएँ ले जाया करते थे। इस दौरान वे नाचते-गाते थे और उनकी तस्वीरें भी ली

जाती थी। अंडमान में बैठे कुछ लोगों को लगा कि यह अच्छी बात है तथा इस तरह से उनसे संपर्क करने वाला दल एक दिन उन्हें पालतू बना लेगा। हालाँकि कुछ और लोगों का मानना था कि यह उनके अंत की शुरुआत है। हो सकता है वे सही सोच रहे हों। आपके हिसाब से उन्होंने ऐसा क्यों सोचा होगा?

1997 में एनमी नामक जारवा लड़का चर्चा में आया और एक नामी हस्ती बन गया। एनमी ने जारवा आदिवासियों का इतिहास बदल डाला। वह कदमतल्ला के पास वन में शिकार करते समय पेड़ से गिर गया और उसका पैर टूट गया। वहाँ की बस्तियों में रहने वालों ने उसे दर्द से कराहते और लंगड़ाते हुए देखा तो उसे पोर्ट ब्लेयर के अस्पताल में ले गए। वहाँ उसका इलाज कराया गया तथा अच्छी तरह से देखभाल की गई। जब वह ठीक हुआ तो वापस उसके घर, जंगलों में लाकर छोड़ दिया गया।

जव वह अपने सामूहिक आवास या घर वापस लौटा उस समय वह कितना रोमांचित था इसका हम सिर्फ अंदाजा लगा सकते हैं। अपने परिजनों को सुनाने के लिए उसके पास बिजली, टेलीविजन, और कैमरे, विदेशज खाने और गाड़ियों की ढेरों कहानियाँ थीं। इस समय तक जारवा बाहरी लोगों के बारे में थोड़ा-बहुत जान गए थे। इसलिए एनमी की कहानियाँ उतनी डरावनी नहीं थी जितनी शायद बीस साल पहले होतीं। तब वे सचमुच बहुत रोमांचित करने वाली होतीं।

जल्द ही जारवा लोगों का छोटा-छोटा दल जंगलों से बाहर निकलकर बिना किसी डर के बस्तियों में घूमने लगा। उन्हें खाना, कपड़े, रेडियो और थैले...और साथ में बीमारियाँ भी दी जाने लगी। उन पर इन्फ्लुएंजा और खसरे का भयानक प्रकोप हुआ जिससे लगभग आधी जनसंख्या समाप्त हो गई। ट्रंक रोड पर चलने वाली बसों और कारों के आसपास कूदते-फाँदते और भीख माँगते जारवा लोगों की तस्वीरें अख़बारों में छपनी शुरू हो गई। वे तमाशा देखने वाले और तस्वीरें लेने वालों के लिए नाचा करते थे और सिर्फ नाचने वाले या नकल करने वाले बन कर रह गए। वाकई एक आजाद और गुंजायमान समुदाय का कितना दुखद अंत हुआ!

परंतु क्या इसे अंत कहा जाना चाहिए? मानव वैज्ञानियों का विचार है कि यदि हम जारवा लोगों को खाना देना बंद कर देते तो वे अपने पारंपरिक जीवन में लौटने के लिए प्रोत्साहित किए जा सकते थे। ऐसा किया जा सकता है क्योंकि जहाँ चाह है वहाँ राह है। जारवा जाति को किसी भी कीमत पर बचाना होगा।

अभी तक हमने जिन वजहों पर चर्चा की है, इसके अतिरिक्त भी एक कारण है।

अनुवांशिकी विशेषज्ञों ने हाल ही में यह पाया है कि अंडमान की आदिवासी प्रजातियों, खासकर जारवा और ओंग मानव की सबसे पुरानी प्रजातियों में से एक है। इनका डीएनए प्राचीनतम है जिसमें कई अनुत्तरित मसलों जैसे कि मानव प्रतिरोध प्रणाली और इसका विकास जैसी कई जानकारियाँ तथा उसमें आड़े आने वाली बाधाओं का निदान छुपा हुआ है। उनके अध्ययन से यह भी जानकारी मिलती है कि ये लोग अफ्रीका के दासों के वंशज नहीं हैं जैसा कि अनुमान लगाया जाता है। न ही ये लोग अफ्रीका से आकर यहाँ बसे हैं। ये भारत की मुख्यभूमि के आदिवासियों से ही उत्पन्न हुए हैं और पूरी तरह भारतीय हैं।

बढ़ती जनसंख्या और घटते संसाधन—यह एक विश्वव्यापी समस्या है। अंडमान और निकोबार के प्रशासन को लगातार इन परस्पर विपरीत समस्याओं में संतुलन साधना पड़ता है जो कोई आसान काम नहीं है। इस बात की बेहद खुशी है कि मैं जंगल का अध्यक्ष या कोई मुख्य प्रतिनिधि नहीं हूँ न ही उन गरीब लोगों में से हूँ जिन्हें ये सब फैसले लेने पड़ते हैं परंतु विशेषज्ञ तीन स्वर्णिम नियमों का पालन करने का आग्रह किया करते हैं—सीमित विकास, बचे हुए वन का बचाव और आदिवासियों के लिए बनाई जाने वाली नीतियों को और बेहतर बनाना। अनियंत्रित विकास का परिणाम हम पहले ही देख चुके हैं। पोर्ट-ब्लेयर, रंगत और दिगलीपुर जैसी जगहों पर ऊर्जा की कमी, प्रदूषण, गंदगी और बीमारियाँ अब जिंदगी का हिस्सा बन चुकी हैं। मूल जंगल का कुछ ही अंश शेष रह गया है और वो भी 'आबादकारों' और इमारती लकड़ी के गैर-कानूनी ठेकेदारों के भारी दबाव में हैं। तीसरा मुद्दा आदिवासियों के लिए बनाई गई नीति रहा है जो अंडमान ट्रंक रोड (एटीआर) के निर्माण व अन्य विकास कार्यों के कारण काफी चर्चा में रहा है। इसके कारण हाल ही में सुप्रीम कोर्ट में केस दायर किया गया जिस पर अंडमान-निकोबार के लिए बनाई गई प्रमुख नीतियों पर बहस हुई तथा उसे बदला गया।

संक्षेप में, हुआ यह था कि—अंडमानी और ओंग जनजातियों के भविष्य को लेकर चिंतित तीन संस्थानों ने अंडमान में हो रहे भूमि अतिक्रमण और भारी संख्या में आने

वाले सैलानियों के खिलाफ कलकत्ता उच्च न्यायालय में मुकदमा दायर कर दिया। सन् 1999 में इस मामले को दिल्ली के सर्वोच्च न्यायालय में स्थानांतरित कर दिया गया। इस मामले की सुनवाई 2001 के अंत में हुई। सर्वोच्च न्यायालय ने फैसला सुनाया कि सिर्फ छोटे से अंडमान में ही नहीं, बल्कि पूरे केंद्र शासित प्रदेश में वनों का काटना बंद किया जाए। न्यायालय ने द्वीप समूह की जरूरतों, तथा जनजातियों की स्थिति के अध्ययन व उस पर अपना सुझाव देने के लिए एक समिति का गठन भी किया। विशेषज्ञों की समिति ने सुझाव दिया कि द्वीप के अति संवेदनशील और महत्त्वपूर्ण पारितंत्र को बचाने

के लिए कुछ अति आवश्यक उपाय किया जाना चाहिए। इन उपायों में—स्थानीय जरूरत के अतिरिक्त पेड़ काटने पर रोक, इमारती लकड़ियों के निर्यात व बाहर बेचे जाने पर रोक लगाना, भूमि अतिक्रमण पर रोक, रेत खनन पर रोक तथा अंडमान ट्रंक रोड को बंद करना प्रमुख था। विशेषज्ञों ने एक-फसली कृषि जैसे पाम ऑयल के वृक्षों का अंडमान में लगाए जाने का तीव्र विरोध किया। पूरे विश्व भर के पारिस्थितिक वैज्ञानिकों का मानना है कि एक-फसली कृषी वातावरण के लिए हानिकारक है।

सुखद बात यह है कि समिति के सुझावों को सर्वोच्च न्यायालय ने मंजूर कर लिया है तथा अंडमान निकोबार के निवासियों ने भी उनका समर्थन किया है। इसके परिणाम स्वरूप वहाँ भारी बदलाव देखने को आ रहा है। हालाँकि यह उतना आसान नहीं है। यहाँ की कई आरा घर बंद कर दी गई है जिससे इमारती लकड़ी उद्योग में काम करने वाले हजारों लोग अपनी नौकरी गंवा चुके हैं। भवन निर्माण में रेत का विकल्प खोजने के बाद धीरे-धीरे यहाँ रेत का खनन भी बंद कर देना चाहिए। यदि हम अंडमान और

निकोबार को रहने लायक देखना चाहते हैं तो हम लोगों के पास इसके सिवा कोई और विकल्प नहीं है।

पर्यटकों के आने-जाने और रेत के खनन का प्रभाव हम यहाँ खुले तौर पर देख सकते हैं। कटान ने जमीन को उजाड़ बना दिया है। मिट्टी की ऊपरी सतह पानी में बह गया है (जो कि वर्षा-वन क्षेत्रों में वैसे ही काफी पतली होती है) तथा मूंगे के चट्टानों के बड़े-बड़े क्षेत्र नष्ट हो चुके हैं। पेड़ों की जड़ों में पानी रोकने की क्षमता में कमी के कारण वर्षा का अधिकांश जल समुद्र में चला जाता है। समुद्री कछुओं के निवास करने वाले महत्त्वपूर्ण समुद्री तट नष्ट हो गए हैं। तटों के घेरे नष्ट हो गए हैं जिसके कारण समुद्र का पानी मुख्य द्वीप के काफी अंदर तक घुस जा रहा है। इसका असर धान तथा अन्य फसलों पर पड़ता है तथा वे नष्ट हो जाती हैं। इतना ही नहीं समुद्री जल अब घरों और सड़कों को भी बहा कर ले जाने लगी हैं। पहले तो हम लोगों ने समुद्र तट को बर्बाद कर दिया अब समुद्री जल को रोकने के लिए दीवारों का निर्माण कर रहे हैं...। हालाँकि अंत में ये दीवार भी कटाव में बह जाते हैं। कुदरत के साथ खिलवाड़ करना दरअसल एक खतरनाक काम है जिसके बाद हम सिर्फ विनाश की अंतहीन सूची ही बना सकते हैं...।

सबसे बड़ी समस्या की बात यह है कि निर्माण, बिजली पर आधारित उद्योग-धंधे, सड़क और परिवहन को ही हम विकास का मानदंड मान बैठे हैं। हमें लगता है कि विकास और पारिस्थितिक बेहतरी का विकास एक साथ संभव नहीं है तथा हमें इन दोनों में से किसी एक को ही चुनना पड़ेगा। जबकि सच यह है कि बिना पारिस्थितिक बेहतरी के मानव का विकास संभव ही नहीं है। यदि इस तरह के संतुलित विकास को हासिल करना है तो हमें विकास की परिभाषा और ढंग को बदलना होगा। हमें अपनी सोच को जमीन से जोड़ते हुए भरण-पोषण करने वाला और पर्यावरण अनुकूल बनाना चाहिए। इसका मतलब है—न प्लास्टिक बैग, न बड़ी-बड़ी इमारतें, न विस्तृत औद्योगिक क्षेत्र तथा सड़कों पर कम-से-कम वाहन। क्या ऐसा संभव है? हाँ, क्यों नहीं? बहुत से देशों में ऐसा सफलतापूर्वक किया जा रहा है।

स्थानीय और विदेशज

निकोबार की मेगापोड एक बहुत ही चित्ताकर्षक पक्षी है। चूजे के आकार का होते ही वे अपने परिश्रम से गिरी हुई पत्तियों और खाद से अपने लिए डिजायनदार घोंसला बना लेती हैं। चूँकि घोंसले की सड़ी हुई वनस्पतियों से इनके अंडों को गर्मी मिल जाती है इसलिए इन पक्षियों की माताओं को अंडे सेने की झंझट से मुक्ति मिल जाती है। इसका मतलब यह नहीं कि वह निर्दयी की तरह अंडों को छोड़कर कहीं और चली जाती है। अपनी चोंच जैसी असामान्य तापमापी (थर्मामीटर) से वह नियमित तौर पर अंडों का तापमान मापती रहती है। मेगापोडों की सबसे अनोखी बात यह है कि इनके चूजे पूरी तरह से विकसित अंगों और पंखों के साथ अंडे से निकलते हैं। ये अंडे से निकलते ही उड़ सकने की स्थिति में होते हैं। अन्य पक्षियों के चूजों की तरह उन्हें उड़ान भरने के लिए लंबे समय तक परिश्रम नहीं करना पड़ता है।

अंडमान और निकोबार के करीब सौ (विशेष क्षेत्रीय) स्थानीय पक्षियों की प्रजातियों में से मेगापोड एक है। आप तो यह जानते ही हैं कि स्थानीय का अर्थ है वे प्रजातियाँ जो विश्व में हर जगह नहीं, बल्कि किसी स्थान विशेष पर ही पाए जाते हैं। करीब 40 स्तनधारी, 10 उभयचर, 30 सरीसृप और सैकड़ों कीड़े-मकोड़े और पौधों की प्रजातियाँ (मूंगियों को मिलाकर) अंडमान और निकोबार की स्थानीय प्रजातियाँ हैं। इनमें से एक है अंडमान की छिपकली। ये गहरे रंग की शर्मिली प्राणी है जो अन्य छिपकलियों से अलग अपने सारे कार्य दिन में करती है। यहाँ मन को मोहने वाले चमगादड़ और पिपिस्ट्रेल्स जैसे अन्य जीव भी हैं जिनके बारे में हमें बहुत कम जानकारी है। अंडमान और निकोबार

द्वीप समूह पर पाए जाने वाले जीव-जंतुओं और पेड़-पौधों का तकरीबन दसवाँ हिस्सा यहाँ की स्थानीय प्रजातियाँ हैं। इन द्वीपों पर स्थानीय प्रजातियों की अधिकता है क्योंकि लगभग दसियों हजार साल पहले ये द्वीप एशिया की मुख्य भूमि से अलग हो गए। इसके बाद बहुत सी प्रजातियों ने यहाँ के अनोखे प्राकृतिक आवास में रहने के लिए अपने आपको उसके अनुकूल बना लिया।

जैसा कि हमने पहले ही देखा है कि इस द्वीप समूह के करीब 400 द्वीपों में कई समृद्ध पारिस्थितिक तंत्र हैं। वन कच्छ वनस्पति के क्षेत्र, समुद्र तट और मूंगे की चट्टानें। इनके अंदर भी कई छोटे-छोटे पारिस्थितिक तंत्र हैं—मसलन, वृक्षों की छतरी, वनों का फर्श, ज्वालामुखी, झील, नदियाँ, पहाड़ तथा अन्य विभिन्न प्रकार की जमीन। यहाँ मुख्य रूप से उष्णकटिबंधीय सदाबहार या वर्षा वन है। अधिकांश वर्षा वन विश्व के उष्णकटिबंधीय इलाकों में पाए जाते हैं। भारत में इस तरह के वन अंडमान और निकोबार द्वीप समूह, पश्चिमी घाट की पहाड़ियों और उत्तर-पूर्व के भागों में पाए जाते हैं। वर्षा वन पूरी दुनिया में सबसे खास और चित्ताकर्षक जीव-जंतुओं का निवास स्थान है। पहाड़ी गुरिल्ला, जगुआर और अविश्वसनीय रूप के खूबसूरत पक्षी इन जंगलों में निवास करते हैं। वर्षा वनों में लाखों वर्षों तक चले

विकास क्रम, उच्च स्तर की नमी तथा सघन सदाहरित वनस्पतियाँ किसी अन्य जीव पारिस्थितिक तंत्र से अधिक जैव-विविधता में सहायक बनती हैं।

जैसा कि आप जानते ही होंगे कि वन आदमी के जीवन में कितना महत्त्वपूर्ण भूमिका अदा करते हैं। वन के बिना जल, ऑक्सीजन और भोजन...दूसरे शब्दों में कहें तो जीवन के बारे में सोचना भी असंभव है। वनों के विनाश (पेड़ों को काटने) से बाढ़ और सूखे का प्रकोप बढ़ता है क्योंकि मानसून में वर्षा का जल सीधे समुद्र में चला जाता है।

इन सर्वविदित तथ्यों को अच्छी तरह जानने के बाद भी हम पेड़ों को काटना जारी रखे हुए हैं। 18वीं सदी के मध्य में अंडमान और निकोबार द्वीप समूह की 95% से ज्यादा जमीन कच्छ वनस्पतियों और वर्षा वन से आच्छादित थीं। आज उस जमीन पर वह हरियाली नहीं है। नक्शों और सर्वेक्षणों में जिन्हें 'जंगल' के तौर पर चिह्नित किया जाता है वे वास्तव में दोयम दर्जे की उपज है—जो सचमुच का वन होने की गफलत पैदा करते हैं। इन घने जंगलों को दोबारा हासिल करना इतना आसान नहीं है क्योंकि इसके बनने में तीन करोड़ (तीस मिलियन) वर्ष लग जाते हैं।

उच्चतम न्यायालय के आदेशानुसार बाहरी लोगों के अंडमान और निकोबार द्वीप समूह में बसने पर प्रतिबंध लगा दिया गया है। लकड़ी उद्योग को भी बंद कर दिया जाएगा। यदि न्यायालय के आदेश पर गंभीरता से अमल किया जाए तो यह द्वीप समूह अपने पारिस्थितिक स्वास्थ्य को फिर से हासिल कर सकता है। वैसे भी यहाँ सौ के करीब राष्ट्रीय प्राणी उद्यान और अभ्यारण्य हैं जिनमें वन, कच्छ वनस्पतियाँ, मूंगे की चट्टान व अन्य पारिस्थितिक तंत्र शामिल हैं। लेकिन हमें यह नहीं भूलना चाहिए कि ये प्रतिबंधित क्षेत्र एक प्रकार से हमारे लिए पवित्र स्थान हैं जिनका हमें अपने निहित स्वार्थ के लिए अतिक्रमण नहीं करना चाहिए। प्राणी उद्यान और अभयारण्यों का बनाया जाना एक तरह से बेहतर कल के लिए किया जाने वाला निवेश है जबकि जंगलों का विनाश हम आज की जरूरतों को पूरी करने के लिए कर रहे हैं। सुरक्षित और सघन वन हमारे भविष्य के लिए भोजन, पानी और ऑक्सीजन सुनिश्चित करते हैं। अक्सर कुछ लालची लोग पैसे कमाने के चक्कर में जंगलों को काटकर इमारती लकड़ी और अन्य वन उत्पादों को बेच कर खूब पैसे तो कमा लेते हैं मगर ऐसा कर वे हम लोगों को अनिवार्य जरूरत की चीजों से वंचित कर देते हैं। यह बहुत जरूरी है कि उन्हें सख्त सजा दी जाए क्योंकि यह ऐसा अपराध है—जिससे एक इलाके में रहने वाले सभी लोग प्रभावित होते हैं। यही तो वनों के विनाश का अर्थ है कि अपराधियों द्वारा लुटेरों और डकैतों की तरह लाखों लोगों की अनिवार्य जरूरत की चीजों को लूट लिया जा रहा है। और तो और, आज यहाँ के लाखों लोग गरीब के गरीब ही हैं जबकि इमारती लकड़ी के ये चोर दिनो-दिन अमीर होते जा रहे हैं। जैसा कि वे बड़े कारों के लिए तेजी से भागते हैं ठीक उसी तरह स्थानीय लोगों की पानी की समस्या बढ़ती जा रही है और इसके लिए उन्हें दूर-दूर तक जाना पड़ता है। क्या इसके लिए आवाज उठाना उचित नहीं है?

उदाहरण के तौर पर हम चेरापूंजी जैसी जगह को ही देख सकते हैं जो किसी समय देश का सबसे अधिक वर्षा वाला क्षेत्र हुआ करता था और अब सूखे जैसी आफत का सामना कर रहा है। जंगलों के विनाश के कारण यहाँ वर्षा का जल जमीन के अंदर चलने वाले जल चक्र में पहुँचने के बजाय पहाड़ियों के इधर-उधर व समुद्र में व्यर्थ चला जाता है। ठीक ऐसा ही अंडमान और निकोबार में भी हो रहा है। जहाँ वन नहीं

वहाँ पानी नहीं—यह एक दुखद सत्य है जिसे हम जितनी जल्दी स्वीकार कर लें उतना ही अच्छा होगा। लेकिन जहाँ तक वातावरण से संबंधित बात है, हम भारतीय भी गलतियों से सबक लेने के मामले में बहुत अच्छे नहीं हैं। हमने बाघ, शेर सहित हजारों अन्य जानवरों को समाप्ति के कगार पर पहुँचा दिया है। हमने विशाल बाँधों का निर्माण कर न सिर्फ प्राकृतिक दृश्यों में बदलाव कर दिया है बल्कि पूरी पृथ्वी के भू-पटल में हेर-फेर कर डाला है। हमने हवा, पानी और मिट्टी में खतरनाक, बल्कि घातक रसायन मिला दिए हैं जिसके कारण अनेक बीमारियाँ फैल रही हैं तथा हर साल हजारों मौतें होती हैं। राहत की बात सिर्फ यही है कि ऐसा करने वाले सिर्फ हम ही नहीं हैं, हमारे तरह और भी कई देश हैं जो ऐसा कर रहे हैं और नासमझी के कारण वे इसके दुष्परिणामों से वाकिफ नहीं हैं।

किसी प्रजाति का समाप्त होना सिर्फ एक पशु-पक्षी या पेड़-पौधे तक ही सीमित नहीं है, बल्कि इसका दुष्प्रभाव अन्य प्रजातियों पर भी पड़ता है। यदि बाघ, शेर या कोई अन्य प्रजाति समाप्त होती है तो यह कुदरत के श्रृंखला में एक बड़ा और अपूरणीय अंतर ला सकता है और इसका असर हमारे जीवन पर भी पड़ेगा क्योंकि हम भी इस कुदरत के श्रृंखला के ही अंग हैं। अंडमान और निकोबार में प्रजातियों के समाप्त होने की प्रक्रिया शुरू हो चुकी है। यहाँ रहने वाले मेगापोड, नारकोंडम होर्नबिल और अंडमान के सुअरों की प्रजातियाँ खत्म होने की कगार पर हैं। ये सभी सिर्फ अंडमान-निकोबार

द्वीप समूह पर मिलने वाली प्रजातियाँ हैं जिसके खत्म होने का मतलब है इनका दुनिया के मानचित्र से गायब होना।

सिर्फ अंडमान-निकोबार द्वीप समूह पर पाए जाने वाले विशेष क्षेत्रीय जीव-जंतुओं और जंगलों की तकरीबन सभी प्रजातियों पर विलुप्त होने का संकट मंडरा रहा है। इनके बीच कुछ ऐसे अजनबी और बिन बुलाए मेहमान घुस गए हैं जिन्हें अपने घर चला जाना चाहिए। वे विदेशज या बाहरी कहलाते हैं और इन्होंने ही यहाँ की प्राकृतिक श्रृंखला को उलटा-पुलटा और ऊपर-नीचे कर दिया है। ये बाहरी पशुओं और जीव-जंतुओं की प्रजातियाँ हैं जो अपने प्राकृतिक निवास स्थान से लाकर यहाँ बसा दी गई हैं। उनको यहाँ बसाने का काम इन्सानों ने किया—चाहे वो भारतीय हो या अंग्रेज। दरअसल मनुष्य इस धरती के सबसे खतरनाक और कुटिल जीव हैं। वह अपने आस-पास की हर चीज में दखल देना, बदलना और अव्यवस्थित कर देना चाहते हैं। इन बाहरी प्रजातियों को

अंडमान और निकोबार में बसाकर इन्सानों ने बड़ी गलती की है। क्योंकि द्वीपों का पारिस्थितिक तंत्र बहुत ही संवेदनशील होता है तथा यह बहुत असानी से संकट में डाला जा सकता है। आश्चर्यजनक रूप से सबसे विनम्र और पालतू कुत्ता इस द्वीप समूह के लिए सबसे विनाशकारी विदेशज साबित हुआ है।

घरेलू कुत्ते इन द्वीपों पर सबसे पहले अठारहवीं सदी के मध्य में पालतू बनाकर लाए गए थे। अठारहवीं सदी के अंत तक ये रोस द्वीप, अबेरदीन और चथम द्वीपों में भोजन की तलाश में मंडराया करते थे और बहुत ही 'उपद्रवी' हो गए थे। इनमें से कुछ अंडमान के आदिवासियों को शिकारी कुत्ते के तौर पर इस्तेमाल करने के लिए दे दिए गए जिससे आदिवासियों के शिकार करने की क्षमता में बढ़ोतरी हुई। तभी से अंडमानी और बाद में करेन आदिवासियों ने हिरण, सुअर और गोह जैसे शिकार की खोज के लिए कुत्तों का उपयोग करना शुरू कर दिया। जल्द ही इन कुत्ते का झुंड अर्द्ध-जंगली पाश्विक बन गए। ये खतरनाक पाश्विक जानवर अनेक वजह से वातावरण के लिए घातक माने जाते हैं। एक बात तो हम सब जानते ही हैं कि वे विदेशज हैं।

आज, इन द्वीप समूह की कई विलुप्त हो रही प्रजातियों में से कई प्रजातियाँ इन आवारा और उपद्रवी कुत्तों की वजह से संकट में हैं। इनकी विनाशकारी हरकतों में से महज एक उदाहरण के तौर पर पेश कर रहा हूँ—ये समुद्री कछुओं के अंडों को खा जाया करते थे तथा समुद्री कछुओं का शिकार भी किया करते थे। कछुओं के प्रजनन काल के दौरान इन घातक संहारकों का झुंड समुद्र तटों के आसपास घूमा करता तथा घोंसला निर्माण में लगी मादा कछुओं को भी काट लिया करता जो बाद में शार्क जैसे परभक्षियों का आसानी से शिकार बन जातीं। प्रकृति वैज्ञानिकों द्वारा ऐसा अनुमान लगाया जा रहा है कि समुद्र तटों पर समुद्री कछुओं के घोंसले की संख्या इन शिकारी कुत्तों की वजह से घट कर आधी रह गई है जबकि कुछ तटों पर तो उन्होंने घोंसला बनाना ही बंद कर दिया है। ठीक इसी तरह वे गोह, मगरमच्छ के बच्चों, पक्षियों व अन्य प्राणियों को भी अपना शिकार बना रहे हैं। ये शिकारी कुत्ते बड़े घातक हैं जो कई प्रजातियों को शीघ्र ही विलुप्ति के कगार पर धकेल सकते हैं। इसके लिए हमें कुछ करना चाहिए।

चूंकि बाहरी जानवरों को खाने या शिकार करने की आदत इन द्वीपों पर पाए जाने वाले जानवरों में नहीं होती इसलिए काफी तेजी से इनकी संख्या में इजाफा होता है और ये संपूर्ण प्राकृतिक निवास स्थान पर कब्जा जमा लेते हैं। ऐसा ही चीत्तीदार हिरण या चीतल के साथ हुआ। चीतल को सबसे पहले 1930 के दशक में अंडमान द्वीप पर लाया गया और आज इसकी संख्या इतनी बढ़ गई है कि यहाँ के लिए यह मुसीबत बन चुके हैं। चीतल यहाँ के देशज पेड़-पौधों के फल, बीज, और अंकुरों को खा जाते हैं जिससे वनों को फिर से सघन बनाने और उन्हें विकसित करने की प्रक्रिया को धक्का लग रहा है। इन द्वीपों पर कोई उनका शिकार करने वाला नहीं है जिसके कारण इनकी संख्या पर नियंत्रण नहीं हो पा रहा है। अब तो इन्होंने आसपास के द्वीपों पर जा कर उपनिवेश बना लिया है। इनकी अनियंत्रित संख्या वृद्धि से द्वीप समूह को अपूरणीय क्षति पहुँची है। सौभाग्य से ये चीतल निकोबार द्वीप तक नहीं पहुँच सके। हालाँकि निकोबार द्वीप पर भी इनसे विशालकाय शाकभक्षियों ने विनाशलीला की और द्वीप की अधिकांश हरियाली को खाकर खत्म कर दिया है। ऐसा कहा जाता है कि बाद में दिवालिया हो गई एक इमारती लकड़ी की कंपनी ने 1950 के दशक में यहाँ 35 हाथियों का झुंड छोड़ दिया। शांत दिखने वाले ये जीव मनुष्यों की मौजूदगी के कारण हिंसक हो गए। ये मनुष्यों पर

हमले और उनकी हत्या करने लगे। जैसा कि हम जानते हैं, हाथियों को टनों भोजन एक दिन में चाहिए और इस तरह से इन्होंने पूरा जंगल उजाड़ दिया।

प्रकृति वैज्ञानिकों के अनुसार इस द्वीप पर इन हाथियों के भोजन के संसाधन घटते जा रहे हैं। इस तरह इनका भविष्य यहाँ संकट में और अनिश्चित है। हाथियों को यहाँ बसाने की प्रक्रिया में इस द्वीप के बड़े और महत्त्वपूर्ण जंगल नष्ट हो चुके हैं। क्या सरकार को ऐसा पारिस्थितिक गुनाह करने वाली इमारती लकड़ी की कंपनी पर मुकदमा कर उन्हें दंडित नहीं करना चाहिए? क्या उन्हें इन हाथियों को फिर से उनकी मुख्यभूमि पर पहुँचाने के लिए नहीं कहना चाहिए ताकि यह द्वीप फिर से हरे भरे हो सके? इसमें कोई संदेह नहीं कि यह बड़ी लंबी प्रक्रिया होगी। सभी हाथियों को वापस मूल निवास पर भेजने के लिए उन्हें बेहोश करना होगा फिर जहाजों पर ले जाना होगा। इसके लिए डार्ट बंदूकें और विशेषज्ञ पशु-चिकित्सकों की जरूरत होगी। यह बहुत कीमती है। मगर इससे कहीं ज्यादा कीमती है हमारी वर्तमान की पारिस्थितिकी जिसे बचाया जाना जरूरी है।

जापानियों के अंडमान और निकोबार पर आधिपत्य के दौरान अंग्रेजी नौ-सेना द्वारा इन द्वीपों की आपूर्ति मार्ग रोक देने से भोजन की भारी कमी हो गई। इससे बचने के लिए जापानी यहाँ विशाल अफ्रीकी घोंघे पालने लगे और खाने लगे। यह भूखा अतिथि यहाँ की वनस्पतियों के लिए विनाशकारी सिद्ध हुआ और इसकी बढ़ती संख्या चिंता का कारण बन गया। इस पर काबू पाने के लिए 1960 के दशक में उन्हें खाने वाले घोंघे की दो प्रजाति यहाँ लाई गई, लेकिन इससे फायदा के बदले और नुकसान ही हुआ। अंडमान और निकोबार में देशज घोंघे की पचासी (85) प्रजातियाँ हैं जिनमें से कुछ पहले ही समाप्त हो चुकी हैं जबकि कुछ इन नई लाई गई बाहरी प्रजातियों द्वारा खत्म कर दी गई हैं। अन्य विदेशज पशु-पक्षी जैसे कौवे, गिलहरियाँ, बकरियाँ, मैना और बिल्लियों ने इस द्वीप समूह के प्राकृतिक संतुलन और वनस्पति-चक्र में स्थायी रूप से हेर-फेर कर दिया है। विदेशज पशु-पक्षियों की प्रजातियों को यहाँ के प्राकृतिक वास में लाकर रखना बहुत बड़ी मुसीबत को दावत देना है। ऐसा सिर्फ अनुभवी और विशेषज्ञ पारिस्थितिक वैज्ञानिकों के सतर्क अध्ययन के बाद कुछ विशेष शर्तों के साथ किया जा सकता है।

1990 में रूस्तक उल्लू को अंडमान द्वीप पर चूहों की संख्या को नियंत्रित करने के नाम पर बसाने की कोशिश की जा रही थी जिसे भारतीय पारिस्थितिक वैज्ञानिकों ने रोक दिया। तेंदुए और सांभर जैसी अन्य जीवों की प्रजातियों को इन द्वीपों पर बसाने की कोशिश की गई मगर वे वहाँ रह नहीं पाए।

कुदरत के साथ छेड़छाड़ करना एक गंभीर गलती है जिससे हम लोगों का जीवन ही संकट में पड़ सकता है। प्रकृति माता ने लाखों वर्षों में इस तंत्र का निर्माण किया है, इससे भला हम कैसे स्पर्धा कर सकते हैं? जितना कम हम प्रकृति के साथ छेड़छाड़ करेंगे उतना हमारी जिंदगी के लिए बेहतर रहेगा। जितना अधिक हम इनके साथ छेड़छाड़ करेंगे या इसका विनाश करेंगे, हमारा भविष्य उतना ही अंधकारमय होगा। इस छोटे से सूत्र का हम कितना पालन, आपस में प्रचार-प्रसार कर पाते हैं यह हम सब के ऊपर है। हमें इसके बारे में अपने दोस्तों, घरवालों और शिक्षकों को बताना चाहिए। यदि हम ऐसा करने में सफल हो जाते हैं तो हमारे पास अंडमान और निकोबार के लोगों को बचाने का अभी भी मौका है।

अंडमान और निकोबार के आदिवासियों के संरक्षण और सशक्तिकरण के लिए अभी भी बहुत कुछ किया जाना बाकी है। हालाँकि इसके लिए हमें अपनी प्रवृत्ति में बहुत बड़ा बदलाव लाना होगा। यदि हम उनकी संस्कृति और जीवन-शैली को स्वीकार और प्रोत्साहित करते हैं तथा उसमें बदलाव या सुधार की कोशिश नहीं करते हैं तो यही बहुत अच्छी शुरुआत हो सकती है। इस पर विचार कीजिए : क्या हमारी आधुनिक और शहरी जीवन इतना लाजवाब है? क्या हम इस लायक हैं कि इन द्वीपों पर रहने वाले लोगों को खुशहाली और संतुष्टी का उपहार दे सकें?